संपादकीय

बच्चे ही हमारे बगीचे की फुलवाड़ी

जिस तरह पृथ्वी की आशा वसन्त ऋतु पर निर्भर होती है उसी तरह किसी राष्ट्र की आशा उसके बच्चों पर निर्भर रहती है। बच्चे ही भविष्य के नागरिक होते हैं। अतः उन्हें सुशिक्षित, सुयोग्य, स्वस्थ तथा सभ्य बनाना तथा उनके खान-पान तथा समुचित पोषण की व्यवस्था करना प्रत्येक राष्ट्र का कर्तव्य है। नेहरू जी कहा करते थे कि हमारे बच्चे ही भारत रूपी बगीचे की फुलवाड़ी हैं और इस फुलवाड़ी का समुचित पालन-पोषण होना चाहिए।

परन्तु खेद है कि हमारे देश के अधिकांश बच्चे दीन-हीन दशा में जीवन-व्यतीत करते हैं और बहुत से तो समुचित पोषण के अभाव में असमय में ही इस दुनिया से कूच कर जाते हैं। देश में गरीबों की संख्या अधिक है और गरीबों के बच्चे जब माता के पेट में होते हैं, तभी से उन्हें समुचित पोषण नहीं मिल पाता। आसरे की महिलाओं को, यदि उनकी इच्छा का खाना-पीना न मिले तो पैदा होने वाले बच्चे के स्वास्थ्य पर तो बुरा असर होता ही है, साथ ही माताओं का भी स्वास्थ्य गिरने लगता है। ऐसी स्थिति में बच्चे लंगड़े-लूले तथा अन्धे-कुब्जे पैदा होते देखे गए हैं।

गर्भस्थ शिशु की परिचर्या पर जितना ध्यान देना आवश्यक है उतना ही पैदा होने के बाद भी देना जरूरी है। यदि बच्चे सबल होंगे तो राष्ट्र सबल होगा। गरीब-अमीर सभी बच्चों का यह अधिकार है कि उनका पालन-पोषण ठीक ढंग से हो। उन्हें न सिर्फ मां-बाप का, बल्कि सारे समाज का स्नेह और प्यार मिले। उन्हें बढ़िया पोषण और स्वास्थ्य सुविधायें प्राप्त हों, बड़े बच्चों के लिए निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था हो। उन्हें खेल और मनोरंजन के साधन उपलब्ध हों। बच्चे यदि लंगड़े-लूले अथवा अन्धे बहरे हों तो उनके लिए विशेष परिचर्या की व्यवस्था हो। बच्चा जाति-बिरादरी धर्म-मजहब रूप-रंग आदि भेदभावों को नहीं जानता और ये भेदभाव भी उसके विकास में बाधक नहीं होनी चाहिए। अर्थात् उसके विकास के सभी साधन उसे बिना किसी भेदभाव के उपलब्ध होने चाहिए।

प्रायः देखा गया है कि गरीब लोग अपने बच्चों को स्कूल भेजने के बजाय छोटी ही उम्र में रोजी-रोटी कमाने के काम में जुटा देते हैं। एक ओर तो सख्त मेहनत और मजदूरी के काम से इन बच्चों का शारीरिक तथा मानसिक विकास रुक जाता है, तो दूसरी ओर मालिक लोग इनसे मारपीट कर काम लेते हैं और इनका बुरी तरह शोषण करते हैं। घरेलू कर्मचारियों में अक्सर ऐसे ही बच्चे होते हैं जिन्हें खाना भी कम दिया जाता है और जिनसे काम भी अधिक लिया जाता है। आनाकानी करने पर मालिक लोग उनकी पिटाई भी करते हैं। अतः जरूरी है कि ऐसे बच्चों के शोषण को कानूनन रोक दिया जाए।

हमारा देश गांवों में बसता है। आज स्वतन्त्रता-प्राप्ति के 31 वर्ष बाद भी हमारे गांव कूड़े के ढेर हैं। वहां गन्दगी का बोलबाला है। न वहां अस्पताल हैं और न सफाई-स्वच्छता की पर्याप्त व्यवस्था है। गांवों का दूध-घी शहरों में खिंचा चला आता है। खेल तथा मनोरंजन के साधनों की तो बात ही क्या, शिक्षा संस्थाओं का भी अभाव है। जहां कहीं प्राथमिक शालाएं हैं वहां पढ़ाई-लिखाई की व्यवस्था ठीक नहीं है। ऐसी स्थिति में गरीबी से पीड़ित बच्चों का कितना शारीरिक और मानसिक विकास हो सकता है उसकी आप खुद कल्पना कर सकते हैं। जरूरत इस बात की है कि हमारे कर्णधार गांवों के बच्चों के विकास के लिए अलग से साधन-सुविधाओं की विशेष व्यवस्था करें।

मज़दूर मंज़िल

कुरुक्षेत्र

वर्ष 24 माह 1900 अंक 3

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो-ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र' (हिन्दी), कृषि और सिंचाई मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे — वार्षिक चंदा 5.00 रु०

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : कु० शशि चावला
मोहन चन्द्र मन्टन

आवरण पृष्ठ : बलराम मण्डल

इस अंक में : पृष्ठ संख्या

पहाड़ी और आदिवासी क्षेत्रों का विकास — 2
सन्तोख सिंह

जात-पांत की दीवार टूटी — 6
कु० अमिता सिंह

समस्याओं से जूझता खेतिहर मजदूर — 7
डा० के० वी० वर्गीज

गांवों में आवास-निर्माण की गति धीमी क्यों ? — 10
देवकृष्ण व्यास

लघु उद्योग: रोजगार संभावनाएं और ग्रामीण विकास — 12
ओम प्रकाश शर्मा

जब साहस ने (कविता) — 14
आजाद राम पुरी

उत्तर प्रदेश में चौमुखी प्रगति का लेखा-जोखा — 14
कृष्ण कुमार

राजस्थान में श्वेत क्रांति — 17
के० पी० अरोरा

अस्पृश्यता: समस्या और समाधान — 20
एस० एल० मेनारिया

पाठकों की राय: ग्राम विकास: एक कठिन परीक्षा — 22
चन्द्र पाल सिंह

सरस्वती का पूजन कहानी — 24
सुलेमान टाक

पहला सुख निरोगी काया: केला खाइये, बल बढ़ाइये — 27
वैद्य गोपाल सहाय शर्मा

साहित्य समीक्षा — 28

कुरुक्षेत्र के बारे में पाठकों की राय — 31

लाभकारी पेड़ पौधे — 32
डा० राम गोपाल चतुर्वेदी

पहाड़ी और आदिवासी क्षेत्रों का विकास

सन्तोख सिंह

हमारे देश के पहाड़ी लोगों की समस्याएं विशेष प्रकार की हैं, जैसे ये संचार-सुविधाओं की कमी के कारण दुर्गम हैं; थोड़ी आबादी वाले और दूर-दूर पर बसे हुए हैं; इनकी जोतें सीमित हैं तथा इनमें उन्नत कृषि-क्रियाओं को लागू करने की सभी संभावनाओं के लिए पूरी तरह के प्रयत्न नहीं किए गए हैं। इसके अलावा, इन इलाकों में विकास और योजना के दृष्टिकोण में समाकलन नहीं रखा गया। इस प्रकार प्राकृतिक-सम्पदा का बड़ा भंडार रहते हुए भी ये पहाड़ी क्षेत्र आर्थिक रूप से पिछड़े रहे क्योंकि इनकी सम्पदा का कोई लाभ नहीं उठाया गया।

प्रारम्भ

पहली तीन योजनाओं की अवधि में पहाड़ी क्षेत्रों के आर्थिक विकास पर विशेष ध्यान दिया गया और इनकी परि-योजनाओं के लिए केन्द्रीय सहायता अधिक मात्रा में दी गई। फिर भी, पहाड़ी इलाकों में कृषि और संबंधित क्षेत्रों के लिए समाकलित आर्थिक विकास कार्यक्रम अभी हाल ही में तैयार किए गए हैं। चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान चार समाकलित कृषि विकास प्रायोजनाएं दो हिमाचल प्रदेश में और उत्तर प्रदेश तथा तमिलनाडु प्रत्येक में एक-एक पश्चिमी जर्मनी की सहायता से शुरू की गई। चूंकि पहली प्रायोजना 1962 में हिमाचल प्रदेश के 'मंडी' जिले में चलायी गयी, अतः ये 'मंडी टाइप' प्रायोजना के नाम से प्रचलित है। इन पहाड़ी प्रायोजनाओं को कार्यान्वित करने से इतने उत्साहजनक परिणाम मिले कि भारत सरकार ने अपने साधनों से भी इसी प्रकार की प्रायोजनाएं शुरू करने का निश्चय कर लिया। इस प्रकार चौथी योजना के अंतिम चरण में दो अन्य पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजनाएं—एक उत्तर प्रदेश के पौड़ी गढ़वाल में और दूसरी मणिपुर के नंगबा उप-मंडल में चलायी गयीं। तभी से इन प्रायोजनाओं पर भी कार्य चालू है। टेहरी गढ़वाल (उत्तर प्रदेश) में एक तीसरी प्रायोजना भी आंशिक केन्द्रीय सहायता से चालू की गई है (1975–76)।

नीति

नीति एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार करने की है, जिसमें निम्नलिखित शामिल हों :—

(1) नयी कृषि प्राद्योगिकी जिसमें सुधरे बीज, उर्वरक, कीटनाशी दवाएं आदि शामिल हैं तथा बहु-फसली खेती के प्रदर्शनों का आयोजन करके एक बड़ा अभियान चलाना है।

(2) बीज और पौध-सामग्री की आपूर्ति करने के लिए पौद्य शालाएं तैयार करना, मौजूदा बागों का सुधार करना, व्यक्तिगत और सामुदायिक दोनों प्रकार की जोतों पर नए बाग लगाना और इस प्रकार बाग-बगीचों का विकास करना।

(3) भूमि को सीढ़ीनुमा बना कर और अन्य मिट्टी-संरक्षण उपायों को अपना कर भूमि विकास करना।

(4) प्रायोजना-क्षेत्र में छोटी जल-धाराओं, गहरे नालों आदि में पम्प लगाकर छोटे बंधेरों/बांधों को बना कर सिंचाई-क्षमता को बढ़ाना।

(5) दूध, अण्डे, मांस आदि का उत्पादन बढ़ाने के लिए डेरी पशु, कुक्कुट और भेड़ों की उन्नत नस्लों का विकास करना।

(6) खेती और बागानी फसलों के लिए परिसंस्करण उद्योग स्थापित करना, साथ ही उनके लिए विपणन और शीत-भंडार की व्यवस्था प्रदान करना।

(7) मुख्य मंडी से जोड़ने वाली सड़कों को बनाना।

(8) ऐसे विकास केन्द्रों की स्थापना, जिनसे परिसंस्करण और विक्रय की सुविधाओं को उनके आस-पास के अन्तर्वर्ती इलाकों तक आसानी से पहुंचाया जा सके।

आर्थिक सहायता

केन्द्रीय क्षेत्र की पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना के निमित्त पांचवीं योजना-अवधि के लिए पहले 300 लाख रुपये का निर्धारण किया गया था (जो बाद में घटा कर 290 लाख रु० कर दिया गया)। नीचे इस धनराशि का प्रायोजना के अनुसार आवंटन और मार्च, 1978 तक उनके लिए दी गई रकम का ब्यौरा दिया गया है :

प्रायोजना का नाम	पांचवीं योजना के लिए निर्धारित राशि (मूल) (लाख रु०)	दी गई रकम शुरू होने से मार्च, 1978 तक (लाख रु०)
1 पौड़ी गढ़वाल (उ० प्र०) .	110	97.71
2. टेहरी गढ़वाल (उ० प्र०) .	75	26.63
3. नंगबा (मणिपुर) . .	115	78.00
	300	202.34

1978–79 के लिए बजट में 100 लाख रुपयों का प्रावधान किया गया है, जिसमें से अगस्त, 1978 तक 34.50 लाख रुपये दिए जा चुके हैं।

समुदाय और क्षेत्र-विशेष के कार्यक्रमों और प्रदर्शन कार्यक्रम के लिए यह एजेंसी 100 प्रतिशत आर्थिक सहायता देती है।

सरकार के [illegible] विभिन्न कार्यक्रमों के लिए यह एजेंसी 50 [illegible] सहायता देती है।

पौड़ी जिले के 14 विकास खण्डों में से 6 विकास खण्डों में पौड़ी गढ़वाल पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना चलाई जा रही है। इस प्रायोजना-क्षेत्र की कुल आबादी 2,05,163 है जो लगभग 40,000 परिवारों में रहती है। टेहरी गढ़वाल पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना 10 विकास खण्डों वाले इस जिले के पूरे क्षेत्र में चलाई जा रही है। इस जिले की कुल आबादी 3,87,973 है जो लगभग 75,000 परिवारों में रहती है।

पश्चिम मणिपुर जिले में पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना प्रारम्भ में नंगबा उप-मंडल में शुरू की गई थी। इस जिले में चार विकास खडों के साथ चार उप-मंडल सह-समापन केन्द्र हैं। 1978-79 से पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना इस जिले के चारों उप-मंडलों में चालू की गई है जिनकी कुल आबादी 44,975 है, जो 6725 परिवारों में रहती है।

प्रशासन व्यवस्था

राज्य सरकार के नियमित विकास विभागों द्वारा जिला-स्तर पर आर्थिक विकास कार्यक्रमों को कार्यान्वित किया जाता है। फिर भी, कोष प्रदान करने, समीक्षा करने आदि कार्यों के द्वारा इसके कार्यकलाप का प्रशासन और समन्वय करने के लिए एक एजेंसी है। यह एजेंसी सोसायटी रजिस्ट्रेशन ऐक्ट, 1860 के अन्तर्गत निबंधित है। उत्तर प्रदेश के पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना एजेंसियों के अध्यक्ष पौड़ी गढ़वाल और टेहरी गढ़वाल के जिला अधिकारी हैं। मणिपुर की पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना एजेंसी के अध्यक्ष पहाड़ी क्षेत्रों के आयुक्त हैं। एजेंसी के चेयरमैन की अध्यक्षता में शासी निकाय की बैठकों में समय-समय पर इन प्रायोजनाओं की प्रगति और समस्याओं की समीक्षा की जाती है। इन प्रायोजनाओं के दैनिक प्रशासन के लिए एक प्रयोजना अधिकारी है, जिसकी सहायता के लिए कुछ तकनीकी कर्मचारी और कर्मचारी दिए गए हैं।

राज्य स्तर

उत्तर प्रदेश सरकार के कृषि उत्पादन आयुक्त पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं के प्रमुख प्रभारी अधिकारी हैं। इन प्रायोजनाओं के लिए इनकी अध्यक्षता में एक राज्य-स्तरीय समन्वित समिति भी है। मणिपुर में पश्चिम मणिपुर जिले की प्रायोजना के प्रभारी अधिकारी पहाड़ी क्षेत्रों के आयुक्त हैं।

केन्द्रीय स्तर

केन्द्रीय सरकार के स्तर पर कृषि और सिंचाई मंत्रालय तथा योजना आयोगों को इन प्रायोजनाओं का निर्देशन और उनकी समीक्षा करने की जिम्मेदारी सौंपी गई है। मंत्रालय स्तर पर एक सचिव समिति बनाई गई है, जो इन प्रायोजनाओं की समीक्षा करती है और उन्हें स्वीकृति प्रदान करती है। योजना आयोग के स्तर पर ग्राम विकास और रोजगार के लिए एक केन्द्रीय समन्वय समिति है, जो समय-समय पर ग्राम विकास परियोजनाओं, जिसमें यह कार्यक्रम भी शामिल है, की समीक्षा करती है।

प्रगति

मार्च, 1978 तक की जो प्रगति रिपोर्ट मिली है, उससे पता चलता है कि पौड़ी गढ़वाल प्रायोजना धान और गेहूं दोनों के सम्बन्ध में किए गए कृषि प्रदर्शन बहुत सफल रहे हैं। पश्चिम मणिपुर प्रायोजना में अधिक उपज देने वाली किस्मों और बहु-फसली कृषि विशेषतः धान की दो फसलें लेने के तरीके को प्रचलित करने से खोपम और नो-ने क्षेत्र, जो पहले खाद्यान्नों के अभाव वाले क्षेत्र थे, अब खाद्यान्नों के मामले में आत्म-निर्भर हो गए हैं। बागवानी में इन प्रायोजनाओं के चालू करने से अब तक 698 हैक्टेयर भूमि पर बाग लगाए जा चुके हैं, जिनसे इन प्रायोजना-क्षेत्रों के लगभग 3000 पहाड़ी किसानों को लाभ पहुंचा है। मिट्टी संरक्षण के संबंध में प्रायोजना चालू होने से अब तक विभिन्न उपायों द्वारा लगभग 1952 हेक्टेयर भूमि का सुधार किया गया जिससे इन क्षेत्रों में रहने वाले लगभग 3250 किसानों को लाभ पहुंचा। लघु-सिंचाई के मामले में भी अच्छी प्रगति हुई। इसके तहत पक्की नालियों (46 कि० मी०) उठाना सिंचाई परियोजनाओं आदि का निर्माण करके इन तीनों प्रायोजना क्षेत्रों में लगभग 749 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई का अतिरिक्त प्रबन्ध किया गया। डेरी, कुक्कुट पालन, सूअर पालन, मछली पालन आदि सहायक धन्धों के द्वारा छोटे और सीमान्त किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए जो प्रयत्न किए गए, उनसे काफी उत्साहजनक परिणाम मिले। पौड़ी गढ़वाल में शुरू किए गए नस्ल सुधार कार्य में बड़ी सफलता मिली है। इसके अलावा, इन दुर्गम और पिछड़े इलाकों में अन्य सुविधाएं बढ़ाने के लिए गांवों में सड़क और गोदाम आदि बनाने का काम भी प्रायोजना-क्षेत्रों में सफलता के साथ किया जा रहा है।

प्रायोजना क्षेत्र का सर्वेक्षण

हैदराबाद, स्थित राष्ट्रीय सामुदायिक विकास संस्थान ने पौड़ी गढ़वाल और पश्चिम मणिपुर प्रायोजना-क्षेत्रों का तकनीकी-आर्थिक सर्वेक्षण किया। योजना तैयार करते समय राज्य सरकारों और प्रायोजना अधिकारियों ने उक्त संस्था द्वारा प्रस्तुत की गई रिपोर्ट का उपयोग किया। इसी प्रकार का एक तकनीकी-आर्थिक सर्वेक्षण टेहरी गढ़वाल में पहाड़ी क्षेत्र विकास प्रायोजना-क्षेत्र में भी लखनऊ विश्वविद्यालय के लोक प्रशासन संस्थान ने पूरा किया है। उसकी रिपोर्ट अभी राज्य सरकार के विचाराधीन है। बाद में इन प्रायोजनाओं का उचित मूल्यांकन करने में सुविधा हो, इसके लिए इन तीनों प्रायोजना-क्षेत्रों में बेंच मार्क सर्वे भी पूरा कर लिया गया है।

पहाड़ी क्षेत्रों के विकास पर पहले बहुत समय से ध्यान नहीं दिया गया। इन प्रदेशों में विकास की गम्भीर समस्याओं को देखते हुए इनके लिए लम्बी अवधि की योजना आवश्यक है। इन दुर्गम पहाड़ी क्षेत्रों में लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन पर पर्याप्त प्रभाव डालने के लिए 5 साल की अवधि बहुत कम है। इसलिए इन प्रायोजना-क्षेत्रों में प्राप्त हुए अनुभवों को इसी प्रकार के अन्य प्रदेशों में भी सभी कार्यकलापों में पूरी तरह से लागू करना चाहिए। जैसा कि पहले बताया गया है

इन प्रायोजनाओं का थोड़ा प्रभाव अवश्य पड़ा है। फिर भी, समस्याएं इतनी जटिल और विविध हैं कि 4 या 5 साल की छोटी अवधि में उनमें कुछ विशेष सुधार नहीं लाया जा सकता। अतः इन प्रायोजनाओं को अभी कम से कम 5 साल तक और छठी योजना के अंत तक चलाना चाहिए ताकि पहाड़ी क्षेत्रों के लिए योजना तैयार करने में पूरा अनुभव प्राप्त होने के साथ-साथ पहाड़ी लोगों के सामाजिक-आर्थिक जीवन पर भी वांछित प्रभाव डाला जा सके।

आदिवासी क्षेत्रों का विकास

भारत में आदिवासियों की एक बड़ी आबादी लगभग 4 करोड़ है, जिसका जीवन-स्तर दरिद्रता की रेखा से भी नीचे है। इन इलाकों के इतने पिछड़े रहने का कारण यह है कि लगातार बहुत समय तक इनकी उपेक्षा की गई, इनकी विशेष प्रकार की समस्याओं को समझा नहीं गया, निवेश कम हुआ और आदिवासी अर्थव्यवस्था को भारतीय समाज की मुख्य धारा से अलग-थलग रखा गया। आदिवासी समुदायों के विकास में महत्वपूर्ण बाधाएं हैं, बड़े पैमाने पर भू-स्वामित्व छिन जाना, अत्यधिक कर्ज का बोझ और विस्तार-सेवा तथा अन्य अवस्थापन सुविधाओं की कमी। भारत के संविधान में उल्लेख किया गया है कि अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों पर विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि उन्हें सामाजिक अन्याय और अन्य सभी प्रकार के अवशोषणों से बचाया जा सके।

केन्द्रीय क्षेत्र के अन्तर्गत आदिवासी क्षेत्र विकास कार्यक्रम देश के कुछ चुनीदा आदिवासी क्षेत्रों में चौथी पंचवर्षीय योजना के उत्तरार्ध में शुरू किया गया। प्रारम्भ में भारत सरकार ने आन्ध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा में आदिवासी क्षेत्र विकास के 6 कार्यक्रम 1971–72 के अंतिम तीन महीनों में शुरू किए। ये प्रायोजनाएं (1) आन्ध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम जिले में (2) बिहार के सिंहभूमि जिले में, (4) मध्य प्रदेश के बस्तर जिले के दांतेवाडा और कोंटा तहसील में और (4) उड़ीसा के गंजम और कोरापुट जिलों में, जहां आदिवासियों की बड़ी आबादी है, चलायी जा रही है। इन सभी प्रायोजनाओं की पांच वर्ष की पहली अवधि मार्च, 1977 में समाप्त होने वाली थी, लेकिन इसे मार्च, 1979 तक दो वर्षों के लिए बढ़ा दिया गया। इसी उद्देश्य से सरकार ने 1973–74 में उड़ीसा के क्योंझर और फूलबती जिलों में दो अन्य आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाएं शुरू की हैं। ये दोनों नयी प्रायोजनाएं भी मार्च, 1979 तक चलेंगी।

नीति

नीति एक समाकलित आर्थिक विकास कार्यक्रम तैयार करने की है, जिसमें निम्नलिखित शामिल हों :—

(1) आदिवासियों की भूमि पर उनके स्वामित्व की रक्षा।

(2) भूमि से अधिक लाभ दिलाने के लिए उन्नत कृषि क्रियाओं का प्रचलन।

(3) इन क्षेत्रों में उपलब्ध भूमि और जल के साधनों का बेहतर उपयोग।

(4) सहायक धन्धों और रोजगार की सुविधाओं की व्यवस्था।

(5) ऐसी प्रणाली का प्रचलन करना जिसमें आदिवासियों को अपनी इच्छानुसार कृषि और वन उत्पादों को इकट्ठा करने और उन्हें उचित-दर की दुकानों में बेचने की सुविधा हो।

(6) ऐसी प्रणाली का प्रचलन करना जिसमें आदिवासियों को उपभोग की वस्तुएं अपनी दैनिक न्यूनतम आवश्यकता के अनुसार उचित दर की दुकानों से प्राप्त हो सकें।

(7) यथासंभव अधिक से अधिक आदिवासी परिवारों को स्थिर कृषि की पद्धति अपनाने के लिए प्रोत्साहन देना।

(8) ऐसे तन्त्र की स्थापना करना जिससे उत्पादन के साथ-साथ उपभोग और सामाजिक कार्यों के लिए भी आसानी से ऋण मिल सके।

(9) स्थानीय महाजनों, अन्य शोषकों और बिचौलियों के चंगुल से आदिवासियों को मुक्त करना; और

(10) आदिवासी क्षेत्रों के लिए बुनियादी अवस्थापना का आधार विकसित करना।

प्रशासन

फिलहाल सभी आठ प्रायोजनाओं का प्रशासन आदिवासी विकास एजेंसी नामक सोसायटी कर रही है, जो सोसायटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट, 1860 के अन्तर्गत निबंधित है। इस एजेंसी के अध्यक्ष जिलाधिकारी हैं और इसके अन्य सदस्य जिला-स्तर के अधिकारी और स्थानीय संसद-सदस्य/विधानसभा-सदस्य हैं।

राज्य स्तर पर एक समन्वय एवं कार्यान्वयन समिति है, जो इसके कार्यक्रम के प्रशासन की समीक्षा करती है।

केन्द्रीय स्तर पर सचिव स्वीकृति समिति बनाई गई है, जो इन प्रायोजनाओं को स्वीकृति प्रदान करती है और उनकी समीक्षा भी करती है। ग्राम विकास और रोजगार की केन्द्रीय समन्वय समिति मुख्य रूप से इन कार्यक्रमों का संचालन करती है और उन्हें नीति सम्बन्धी मार्ग दर्शन प्रदान करती है।

व्यय

प्रथम 6 आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं में से प्रत्येक के व्यय के लिए प्रारम्भ में आर्थिक विकास के मुख्य कार्यक्रम हेतु 1.50 करोड़ रुपये तथा योजक सड़कों के निर्माण हेतु 0.50 करोड़ रुपये की रकम 5 वर्ष के लिए निर्धारित की गई थी। इनकी कार्य-अवधि बढ़ा देने पर 1977 में श्रीकाकुलम, गंजम और कोरापुट प्रत्येक की आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजना के लिए 80 लाख रु० और सिंहभूमि की आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजना के लिए 50 लाख रु० का अतिरिक्त आबंटन किया गया ताकि इनके आर्थिक विकास कार्यक्रमों की आर्थिक सहायता हो सके। शेष दोनों नयी प्रायोजनाओं के मामले में इनके आर्थिक विकास कार्यक्रमों की आर्थिक सहायता के लिए प्रत्येक को

1.58 [illegible] की गई थी। इन दोनों प्रायोजना [illegible] के निर्माण पर जो खर्च आएगा, उसे राज्य सरकार के साधनों से पूरा किया जाएगा।

30 जून, 1978 तक इन आठ प्रायोजनाओं के लिए आबंटित रकम का लगभग 83 प्रतिशत अर्थात् 14.92 करोड़ रुपये इस कार्यक्रम के अन्तर्गत दिए जा चुके हैं। अब तक इन आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं का व्यय निष्पादन काफी अच्छा रहा, क्योंकि जून, 1978 तक लगभग 14.61 करोड़ रु०, जो कुल दी गई रकम का लगभग 83 प्रतिशत है, उपयोग में लाया जा चुका है।

अस्तित्व में आने के बाद से ही इन एजेंसियों ने निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने अर्थात् आदिवासियों की आर्थिक स्थिति को सुधारने की कोशिश लगातार जारी रखी है। प्रारम्भ से 31 मार्च, 1978 तक विकास के प्रमुख क्षेत्रों में इनकी उपलब्धि नीचे दी गई है :—

गया क्षेत्र	7.44 लाख एकड़
विभिन्न फलों के वृक्षों के लिए बांटे गए छोटे पौधे, पौध, गूटी और कलम .	7,26,441
बांटे गए हल-बैल . . .	12,797
सुधारी गई भूमि . . .	23,531 एकड़
भूमि-विकास के अन्तर्गत क्षेत्र जिसमें अभी सुधार कार्य जारी है . .	2,720 एकड़
लघु सिंचाई कार्यक्रम . .	5,587 कुएं खोदे जा चुके हैं और 2392 कुएं खोदने का काम चल रहा है (इस कार्यक्रम से कुल सिंचाई क्षमता 60,148 एकड़ होने का अनुमान है)

संचार कार्यक्रम

68 बड़ी सड़कें (604.94 कि० मी०) और 16 छोटी सड़कें (427.77 कि० मी०) बनायी जा चुकी हैं। अन्य संबंधित कार्यों जैसे डेरी, मुर्गीपालन, पशुपालन और मछली-पालन के मामले में भी प्रारम्भ से ही सभी आठ आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं में अच्छी प्रगति हुई है।

इन आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं में विभिन्न आर्थिक विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत अधिक से अधिक आदिवासी परिवारों को लाभ पहुंचाने का दृष्टिकोण रखा गया है। प्रारम्भ में यह सोचा गया था कि पहली 6 आदिवासी विकास प्रायोजनाओं में से प्रत्येक में 5 साल की अवधि में 50,000 आदिवासियों को शामिल कर लिया जाएगा। लेकिन इनकी कार्यावधि बढ़ा देने पर श्रीकाकुलम, गंजम और कोरापुट प्रत्येक में शामिल किए जाने वाले आदिवासियों की संख्या 70,000 और सिंहभूमि में 65,000 निर्धारित की गई है। क्योंझर और फूलबनी की दोनों नयी प्रायोजनाओं के लिए यह लक्ष्य 50,000 (प्रत्येक) रखा गया है। जरूरतमंद वर्ग के कुल 4.75 लाख आदिवासियों को इन प्रायोजनाओं से लाभ पहुंचाने का लक्ष्य था। मार्च, 1978 तक 3.36 लाख आदिवासियों को लाभ मिलने लगा है जोकि कुल निर्धारित लक्ष्य का 71 प्रतिशत है। आग की सारणी में इसका ब्यौरा दिया गया है :—

आदिवासी क्षेत्र विकास का नाम	मार्च, 1979 तक का निर्धारित लक्ष्य	मार्च, 1978 तक लाभान्वित लोगों की संख्या	कुल निर्धारित लक्ष्य का प्रतिशत
आन्ध्र प्रदेश			
श्रीकाकुलम .	70,000	59,664	85.2
बिहार			
सिंहभूमि .	65,000	61,993	95.4
मध्य प्रदेश			
दांतेवाड़ा .	50,000	37,408	74.8
कोंटा . .	50,000	43,055	86.1
उड़ीसा			
गंजम . .	70,000	28,459	40.7
कोरापुट .	70,000	38,021	54.3
क्योंझर .	50,000	30,933	61.9
फुलबनी .	50,000	36,000	72.0
योग . .	4,75,000	3,35,533	70.6

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कार्यकलापों को तेजी से चलाने के लिए भारत सरकार ने 1971 में निम्नलिखित तीन अध्ययन दल बनाए :—

(1) आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं की सरकारी संरचना के लिए श्री के० एस० बावा, संयुक्त सचिव की अध्यक्षता में एक अध्ययन दल।

(2) आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं में ऋणग्रस्तता और भूमि-स्वामित्व की बेदखली से छुटकारा, छीनी गई भूमि को फिर से उनके मालिक आदिवासियों को दिलाने के विषय में श्री पी० एस० अप्पू, संयुक्त सचिव की अध्यक्षता में अध्ययन दल।

सहकारी संरचना के अध्ययन दल ने अपनी रिपोर्ट में सिफारिश की है कि प्रायोजना क्षेत्रों में सहकारी समितियों का पुनर्गठन और सुधार किया जाए जिससे आदिवासी विकास कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए पर्याप्त माला में सांस्थानिक ऋण संरचना को पुनर्गठित करने का काम शुरू किया जा सके और आदिवासियों को ऋण तथा अन्य संबंधित सेवाएं उपलब्ध करायी जा सकें। इसी प्रकार ऋण ग्रस्तता, भू-अपहरण आदि के अध्ययन दल ने सिफारिश की है कि आदिवासियों का कर्ज कम करने के लिए ऋण-सहायता कचहरी स्थापित की जाएं, पहले से लिए गए ऋण को चुकाने के लिए कर्ज दिए जाएं, आदिवासियों को संस्थागत ऋण दिलाने की सुविधाएं दी जाएं, आदिवासियों को अपनी भूमि पर फिर से कब्जा दिलाने में

सहायता दी जाए और भू-स्वामित्व के हस्तांतरण के मामलों पर फिर से विचार किया जाए तथा जो भूमि अवैधानिक रूप से हड़प ली गई है, उसे फिर से आदिवासी मालिकों को लौटाने की व्यवस्था की जाए। उचित कार्रवाई करने के लिए ये सिफारिशें सम्बन्धित अधिकारियों को भेज दी गई हैं। इनका कार्यान्वयन विभिन्न प्रायोजनाओं में अलग-अलग स्थिति में है।

आदिवासी क्षेत्रों के विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के लिए आधार-स्तर स्थापित करने और अब तक किए गए सुधार कार्यों का मूल्यांकन करने हेतु किए गए बेंच मार्क सर्वे की सिफारिशें भी सभी आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं और संबंधित राज्य सरकारों को भेज दी गई। सभी आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं में उपर्युक्त सिफारिश के अनुसार आवश्यक सर्वेक्षण किए गए।

अनुसंधान

इन पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों में उगायी जाने वाली विभिन्न फसलों आदि पर अनुसंधान की समस्याएं उपेक्षित रहीं, इसके कारण झूम खेती, संचार की कमी के कारण इनका दुर्गम होना, कृषि-जलवायु की स्थिति में भिन्नता आदि हैं। इन क्षेत्रों में संबंधित फसलों पर उचित अनुसंधान कराने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और संबंधित कृषि विश्वविद्यालयों के सहयोग से अनुसंधान परियोजना को अंतिम रूप दिया गया है। इस परियोजना के अन्तर्गत गंजम और कोरापुट की आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं ने 10 लाख रु० की सहायता देकर उड़ीसा के कोरापुट जिले के सिमाली-गुडा में हाल ही में एक अनुसंधान उप-केन्द्र स्थापित किया है।

मूल्यांकन

1975–77 के दौरान पहली 6 अग्रिम प्रायोजनाओं का मूल्यांकन कृषि-आर्थिक अनुसंधान केन्द्र द्वारा किया गया था। मूल्यांकन रिपोर्ट से पता चलता है कि विभिन्न आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं ने वांछित कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने में काफी सफलता प्राप्त की है। आदिवासियों, राज्य सरकारों और स्थानीय पंचायत समितियों में इन कार्यक्रमों के प्रति रुचि जगाने में भी इन प्रायोजनाओं को बहुत-कुछ सफलता मिली है। विभिन्न आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाओं को चालू करने के बाद से इन स्थानीय संस्थाओं और राज्य सरकारों ने अपने आदिवासी विकास कार्यों में कटौती नहीं की है। आदिवासी क्षेत्र विकास कार्यक्रमों को पूरा करने में लगी हुई विभिन्न संस्थाओं में समन्वय की स्थिति भी संतोषजनक पाई गई।

आदिवासी क्षेत्र विकास प्रायोजनाएं मुख्य रूप से अग्र-प्रायोजनाएं हैं, जिनका लक्ष्य देश के आदिवासी लोगों की स्थिति में सुधार लाना है, जो बहुत समय से राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से अलग हो गए हैं। आदिवासियों की अधिक आबादी वाले सभी राज्यों में आदिवासी क्षेत्रों के लिए जो समाकलित आदिवासी विकास प्रायोजनाएं शुरू की गई हैं उनमें भी आदिवासी विकास एजेंसी के बुनियादी "प्रायोजना" दृष्टिकोण को स्वीकार किया गया है। ●

अनुवादक—जगदीश नारायण
हिन्दी अधिकारी
कमरा नं० 235 एफ० विंग
शास्त्री भवन,
नई-दिल्ली 110001

जात पांत की दीवार टूटी ※ कु० अमिता सिंह

तुलाराम पंडित घर में बैठा-बैठा सब कुछ देखता रहा कि उसके पड़ौसी का घर लुट रहा है। वह चाहता तो आवाज देकर गांव भर को जगा सकता था। गांव का पुरोहित होने के नाते उसकी बात भला कौन टाल सकता था परन्तु वह तो मन ही मन सोचता रहा कि डकैती एक ऐसे व्यक्ति के घर पड़ रही है जिससे कि कुछ ही दिन पूर्व वाद-विवाद हो चुका था और फिर एक जूते बनाने वाले चमार के पीछे अपनी जान जोखिम में डालना तुलाराम ने मूर्खता समझी।

डकैतों ने यह भांप लिया कि गांव में जात-पांत का जहर फैला हुआ है। संयोग की बात कि एक महीने पश्चात् तुलाराम के घर भी वह डकैत आ घुसे। परन्तु उस चमार पड़ौसी ने जान की परवाह न करते हुए गांव भर को जगा कर डकैतों से डट कर मोर्चा लिया और अन्त में उन्हें गांव से भगा कर छोड़ा। तुलाराम बड़ा शर्मिन्दा था। हाथ जोड़ कर जब वह माफी मांगने चमार पड़ौसी के सामने गया तो उसने नपे-तुले शब्दों का सादा सा जवाब दिया, 'जब हमारी कठिनाइयां समान हैं तो इस समाज में जात-पांत की झूंठी दीवारें उठाकर उसकी संगठन शक्ति को कमजोर बनाना ठीक नहीं। हमें साथ ही चलना पड़ेगा क्योंकि हमारे पथ समान हैं। पैर का जूता, टोपी से अधिक शोभा देता है।' 'तुलाराम गदगद' हो पड़ौसी के गले लग गए। ●

—6सी/13, आजाद नगर
खन्दारी,
आगरा-282002 (उ० प्र०)

देश के कोई 5 करोड़ खेतिहर मजदूरों की हालत शोचनीय एवं खेदजनक है। उन्हें पैसे की तंगी है। समाज में उनका कोई दर्जा नहीं है। वे ऊंच-नीच की चक्की में पिस रहे हैं। उनका न केवल वर्तमान, बल्कि भविष्य भी अंधकारमय है। ये लोग हर प्रकार से अभागे हैं। उनकी अनेक ऐसी आर्थिक लाचारियां हैं, जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। इसके अलावा, वे शान्त प्रकृति के और राम-भरोसे रहने वाले लोग हैं जिसके कारण उनकी समस्याएं खुले रूप में समाज के सामने नहीं आ पातीं। पर अब समय आ गया है जब हम इन बातों की अनदेखी नहीं कर सकते। अब हमें इन बातों को खासतौर पर गहराई से विचार करके इस सम्बन्ध में योजना बनानी चाहिए क्योंकि खेती हमारी राष्ट्रीय आय का प्रमुख साधन है। खेती-बाड़ी एक ऐसा क्षेत्र है जो खेतिहर मजदूर के दम-खम पर टिका हुआ है। अतः खेतिहर मजदूर के मसलों और उन्हें

भारत में खेती-बाड़ी के धन्धे में लगे मजदूरों की संख्या
(1901–71)

साल	कुल आबादी	कुल मजदूर	कुल खेतिहर मजदूर	कालम 3 से कालम 4 की फीसदी
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)
1901 . .	236.28	110.71	17.26	15.59
1911 . .	252.12	121.30	24.06	19.84
1921 . .	251.35	117.75	19.65	16.69
1931 . .	279.02	120.67	22.11	18.33
1941				
1951 . .	361.13	139.42	27.50	19.72
1961 . .	439.23	188.68	31.52	16.71
1971 . .	547.95	180.37	47.48	26.33

समस्याओं से जूझता खेतिहर मजदूर

* डा० के० वी० वर्गीज

हल करने के तरीकों को ढूंढ़ना न सिर्फ जरूरी है, बल्कि देश की समृद्धि के लिए असीम संभावनाओं से भरपूर है। यह समस्या इस दृष्टि से और भी महत्व की है कि भारत जैसे देश में पैदावार के तौर-तरीके मशीनों पर नहीं, बल्कि जन-बल पर आधारित हैं।

पहली खेतिहर मजदूर जांच समिति ने बताया है कि आखिर खेतिहर श्रमिक हैं कौन? उसके अनुसार अगर कोई व्यक्ति खेती-बाड़ी के काम में भाड़े के मजदूर के रूप में काम करता है और साल में जितने दिन भी वह काम करता है, उसमें से आधे से ज्यादा समय तक अगर वह ऐसा खेती-बाड़ी का काम करता है तो उसे खेतिहर मजदूर माना जायेगा। इस दृष्टि से खेतिहर मजदूर वह व्यक्ति है जो अपना पेट पालने के लिए दूसरों की जमीन पर ऐसे काम करता है, जैसे जमीन तैयार करना, जुताई करना, बुवाई करना, रोपाई करना, नराई करना, सिंचाई करना, छंटाई करना और फसल की कटाई आदि करना।

इस सदी के आरम्भ में खेतिहर मजदूरों की संख्या 1 करोड़ 72 लाख 60 हजार थी, जो कुल मजदूरों की 15.59 प्रतिशत थी। इस सदी में खेतिहर मजदूरों के बारे में एक खास ध्यान देने योग्य बात यह है कि हाल के दस-बीस वर्षों में जहां कुल मजदूरों की तादाद में कुछ थोड़ी-सी कमी हुई है, वहां खेतिहर मजदूरों की तादाद लगातार बढ़ती गई है। 1951 में उनकी संख्या 2 करोड़ 75 लाख थी जो 1971 में बढ़कर 4 करोड़ 74 लाख 80 हजार तक पहुंच गई। (देखिए उपरोक्त सारणी) खेतिहर मजदूरों की संख्या में इस असाधारण वृद्धि के कारण डा० राधा कमल मुखर्जी के शब्दों में संक्षेप में इस प्रकार हैं:

(1) छोटे जोतदार की माली हालत में गिरावट और उसके फलस्वरूप खेतिहर मजदूरों की संख्या में वृद्धि।
(2) देहात की अर्थ-व्यवस्था में साझे अधिकारों का अभाव।
(3) जोतों के छोटे-छोटे टुकड़े करना।
(4) सामूहिक उद्योग-धन्धों का चलन बन्द करना।
(5) मालगुजारी लेने वालों की भरमार।
(6) बिना किसी रोक-टोक के जमीनें गिरवी रखना और उनका तबादला, और
(7) घरेलू उद्योग-धन्धों की खस्ता हालत।

घटिया आर्थिक दर्जा

खेतिहर मजदूर आमदनी के लिहाज से सबसे घटिया स्तर वाला व्यक्ति होता है। उस पर तिहरी मार पड़ती है। उसे पूरा रोजगार नहीं मिलता। जो मिलता है वह भी सिर्फ खेती के सीजन में और मजूरी के नाम पर मिलती है सिर्फ नाममात्र की मजूरी। खेतिहर मजदूरों और उनके परिवारों के सम्बन्ध में जो जांच-पड़ताल की गई है उससे पता चलता है कि खेतिहर मजदूरों में से ज्यादातर को रोजगार के भरपूर अवसर नहीं मिलते। इसकी खास वजह यह बताई गई है कि एक तो खेती कोई बारहमासी धंधा नहीं है और दूसरे खेती के क्षेत्र पर मन्दी का कोप है। श्रम मंत्रालय द्वारा की गई एक जांच पड़ताल के अनुसार पश्चिमी बंगाल में खेतिहर मजदूरों को साल में औसत से 220 दिन काम मिलता है। मद्रास में उन्हें वर्ष में 200 दिन, बिहार में 151 दिन, और

मैसूर में 121 दिन काम नसीब होता है।

उद्योग धन्धों में लगे मजदूरों और खेतिहर मजदूरों की मजूरी में भी आकाश-पाताल का अन्तर है। उद्योग में काम करने वाले मजदूर की तुलना में खेतिहर मजदूर की प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति आय इस प्रकार है:

राज्य	आय (खेतिहर मजदूर)	आय (औद्योगिक मजदूर)
बंगाल	160 रुपये	268 रुपये
बिहार	119 ,,	332 ,,
उड़ीसा	79 ,,	145 ,,
मध्य प्रदेश	87 ,,	262 ,,
पंजाब	121 ,,	216 ,,
बम्बई	88 ,,	368 ,,

जहां तक खेतिहर मजदूरों की मजूरी स्तर का सम्बन्ध है, वह अलग-अलग राज्य में अलग-अलग है और आमतौर पर बहुत ही घटिया है। मिसाल के तौर पर पंजाब में मजूरी का कम-से-कम स्तर 1 से ढाई रुपये तक, मद्रास में 75 पैसे से सवा रुपये तक, पश्चिमी बंगाल में ढेढ़ से सवा दो रुपये तक और उत्तर प्रदेश में 1 से डेढ़ रुपये तक है। खेतिहर मजदूर सम्बन्धी जांच-पड़ताल के अनुसार औसत वार्षिक आय 447 रुपये के लगभग थी, जबकि 1956–57 में वह 437 रुपये के आसपास थी। इस प्रकार 5 व्यक्तियों वाले एक परिवार की प्रति व्यक्ति आय केवल 90 रुपये प्रतिवर्ष के आस-पास बैठती है। इन बेबस अभागे लोगों पर दुहरी मार पड़ रही है। एक ओर तो नाममात्र की मजूरी की मजबूरी है तो दूसरी ओर कमरतोड़ महंगाई है। इन दो पाटों के बीच में ये लोग जीवन भर पिसते रहते हैं। जैसा कि श्री जगजीवन राम ने भी कहा है, उनके लिए अपना पेट पालना तो दूर की बात है, वे अपने लिए दो जून तो क्या एक जून की भी रोटी नहीं जुटा पाते। अकाल जांच कमीशन (1945) की जांच से निश्चित रूप से यह पता चलता है कि बंगाल अकाल के दौरान भुखमरी के सबसे ज्यादा ग्रास ये खेतिहर मजदूर ही बने। वास्तव में होता यही है कि जब-जब अकाल पड़ता है, महामारी फैलती है, महंगाई बढ़ती है या अन्य ऐसे ही असाधारण आर्थिक झटके लगते हैं तो उनका सबसे पहला डंडा इन बेचारे खेतिहर मजदूरों की झोपड़ी पर पड़ता है। 'करेला और नीम चढ़ा'। इसमें अचरज की क्या बात है कि पैसे-पैसे को मुहताज, जर्जर, गरीब इन फटे हाल लोगों को समाज भी अच्छी निगाह से नहीं देखता। वे शेष समाज की ऊंच-नीच की भावना के शिकार बनते रहते हैं।

कर्ज का मर्ज

जब देश का समूचा किसान वर्ग ही जिन्दगी भर कर्ज के पहाड़ के नीचे कराहता रहता है और विरासत में अपनी औलाद के लिए भी कर्ज छोड़कर ही मरता है तो बेचारे खेतिहर मजदूर की क्या बिसात, जिसकी हालत और भी ज्यादा खस्ता होती है। कर्ज के नर्ज की यह कहानी हम अपने बड़े-बूढ़ों से भी सुनते आए हैं। होना तो यह चाहिए था कि समय के साथ-साथ यह मर्ज कम होता जाता, लेकिन यह एक ऐसा शाप बनकर रह गया है जो जीवन भर आज भी उनका पिंड नहीं छोड़ रहा है। यह कर्जदारी दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। डाक्टर वी० वी० नारायण स्वामी की पड़ताल के अनुसार भूमिहीन श्रमिक पर ऋण का भार लड़ाई के दौरान लगभग 45.6 प्रतिशत तक बढ़ गया था। खेतिहर मजदूर संबंधी पड़ताल के अनुसार 1950–51 में खेतिहर मजदूरों पर कर्ज का कुल भार 80 करोड़ रुपये था, जो 1956–57 में बढ़कर 143 करोड़ रुपये तक पहुंच गया। 1950–51 में प्रति परिवार कर्ज की औसत रकम 105 रुपये थी जो 1956–57 में 138 रुपये तक पहुंच गई। 1950–51 में 45 प्रतिशत परिवार कर्ज में डूबे हुए थे, जबकि 1956–57 में 64 प्रतिशत परिवार कर्ज की चपेट में थे। आंकड़े तो और भी दिये जा सकते हैं, लेकिन इस बारे में सभी एकमत हैं कि खेती के क्षेत्र में जो तरक्की होती है अथवा चीजों के जो दाम बढ़ते हैं उनका लाभ समाज के इस वर्ग को मिलता ही नहीं। कर्ज से तो वह सदा ही पिसता रहता है। उसके कारण लाचार होकर उसे गुलामों अथवा बन्धक मजदूरों की सी जिन्दगी बितानी पड़ती है। ज्यादातर होता यह है कि बेचारे मजदूर को विवश होकर अपने हड्डी तोड़ श्रम को अथवा नन्हें-मुन्ने भूमि के प्लाट को अथवा दोनों को कसाई से भी कठोर सूदखोर महाजन के हवाले करना पड़ता है।

निपट गरीबी और कम पैदावार

इन मजदूरों के लिए गरीबी कोई आई-गई बात नहीं है, बल्कि उनके लिए जीवन का एक ऐसा अभिशाप है जो जोंक की तरह उनका खून चूसता ही रहता है। यह कोई आंकड़े से सिद्ध करने वाली बात नहीं है, बल्कि एक हकीकत है। उन्हें जिन्दा रहने के लिए जीवन भर खटना पड़ता है, संघर्ष करना पड़ता है, जूझना पड़ता है। उनको गरीबी के इस भंवर से निकालने के लिए कोई न कोई साधन तो होना ही चाहिए। गरीबी के कारण उनकी दशा इतनी दयनीय हो गई है कि उन्हें मानव कहना मानवता का अपमान करना है। दम घोंटने वाली इस गरीबी के कारण ही इन लोगों की गर्दन पर भुखमरी, गन्दगी, बारहमासी बीमारियों और अकाल मृत्यु की नंगी तलवार सदैव लटकती ही रहती है।

खेती-बाड़ी करने वाले एक औसत श्रमिक की कुल सालाना आमदनी 501 रुपये है, जबकि निर्माण उद्योग के क्षेत्र में यह आमदनी 2952 रुपये है और उत्पादन उद्योग के क्षेत्र में 2320 रुपये है। एक औसत खेतिहर मजदूर के मुकाबले खेती से इतर क्षेत्र में छः गुनी आय होती है। भारत में प्रति श्रमिक औसत फार्म पैदावार (यूनिटों में) अनुमानतः 2.2 यूनिट है, जबकि अमरीका में वह 96.2 यूनिट है। 1860 में अमरीका में औसत से एक फार्म मजदूर इतनी पैदावार कर सकता था जिससे वह न सिर्फ अपना बल्कि अन्य चार व्यक्तियों का भरण-पोषण कर सकता था। 1940 और 1950 के बीच के वर्षों में वह अन्य 9 व्यक्तियों का और 1960 तक 25 से भी अधिक व्यक्तियों का भरण-

[illegible] भारतीय खेतिहर मजदूर की असल क्षमता का संबंध है, हमें इतने बड़े अन्तर को पाटना है।

उपर्युक्त तथ्य से यह बात स्पष्ट रूप से उभर कर हमारे सामने आती है कि अब खेतिहर मजदूर गरीबी को लांघकर कंगाली की चौखट तक जा पहुंचा है। रहन-सहन का इससे घटिया स्तर और क्या हो सकता है? उसे मानव गरिमा के योग्य तो कदापि नहीं कहा जा सकता। उनके लिए उनके लायक सिर छिपाने की जगह भी नहीं है। वे स्वस्थ कैसे रहें। वे छोटे-छोटे कच्चे घरों में रहते हैं। उनसे तो जानवरों के बाड़े भी कहीं बेहतर होते हैं। सुख-सुविधा की तो बात क्या, वे अपने लिए जिन्दा रहने लायक मामूली साधन भी नहीं जुटा पाते। खेतिहर मजदूरों के पारिवारिक बजट देखने से पता चलता है कि उनकी खुराक बहुत ही घटिया स्तर की होती है। किस्म की तो बात क्या, जब उन्हें भर पेट खुराक ही नहीं मिलती। मोटा-झोटा खाकर वे जी भर लेते हैं। चीनी, दूध और घी के तो उन्हें महीनों दर्शन नहीं होते। कभी-कभार तीज-त्यौहार पर वे मांस अथवा मच्छी का स्वाद ले लेते हैं। फरनीचर के नाम पर टूटी-फूटी चारपाई अथवा चटाई होती है। अन्य सुख-सुविधा के लिए तो वे जीवन भर तरसते रहते हैं।

औद्योगिक मजदूरों की तरह का खेतिहर मजदूरों का कोई संगठन नहीं होता। इसका कारण यह है कि वे जहां-तहां बिखरे हुए हैं और अनपढ़ भी हैं। इसके कारण वे सौदेबाजी नहीं कर सकते। नतीजा यह होता है कि समाज में उनका कोई महत्व नहीं होता और न ही उनकी कोई परवाह की जाती है। न ही उन्हें अपनी खुशहाली के लिए संगठित प्रयासों का लाभ मिल पाता है। तिस पर मालिक और सूदखोर महाजन उन्हें बेरहमी से जी भर-कर दबाते और निचोड़ते रहते हैं।

जब कि अन्य मजदूरों के पास कोई-न-कोई बसेरा होता है, खेतिहर मजदूरों को खुले में, खलिहानों में, फार्मों पर चिलचिलाती धूप में, घनघोर वर्षा में और हड्डी को कंपा देने वाले ठंडे मौसम में जी-तोड़ परिश्रम करना पड़ता है जबकि शेष संसार अपने-अपने घरों में पैर पसार कर सुख की नींद लेता है, खेतिहर मजदूर समय-असमय अलसुबह घंटों तक पानी और दलदली भूमि में खड़ा रहता है। ये सब बातें उसकी सेहत को चौपट करने वाली हैं। कपड़े के नाम पर उसके तन पर मिट्टी से सना और तार-तार कपड़ा होता है। इसके छिद्रों से उसकी गरीबी और बेबसी ही झलकती है। फिर भी विडम्बना यह है कि उसे इन हालातों में भी काम करना ही पड़ता है। न करे तो भूखों मरे।

संभव उपाय

अब तक यह स्पष्ट हो गया होगा कि खेतिहर मजदूर वर्ग के सामने अनेक आर्थिक कठिनाइयां हैं, जिनकी ओर तुरन्त ध्यान दिया जाना चाहिए। यदि ऐसा न किया गया और टाल-मटोल की गई तो उससे राष्ट्र का ही अहित होगा। कृषि-सुधार समिति ने ठीक ही कहा है कि कृषि सुधार की किसी योजना में खेतिहर मजदूर के मसले को अनदेखा करना ऐसा ही है जैसे कि किसी विलखते हुए बच्चे को रोता छोड़ देना। श्रम न सिर्फ उत्पादन का साधन ही है, बल्कि उसका साध्य भी है, क्योंकि मानव बल से बड़ा और कौन-सा साधन किसी राष्ट्र का हो सकता है। भारत जैसे कृषि-प्रधान देश में खेतिहर मजदूर न केवल कृषि के क्षेत्र में क्रांति ला सकता है, बल्कि हमारी आर्थिक दशा को हिमालय की बुलन्दी तक भी पहुंचा सकता है। खेती के क्षेत्र में अर्थ-व्यवस्था में चौमुखी तरक्की और नई बहार लाने के लिए हमें खेतिहर मजदूर की पीठ थपथपानी होगी। उसे आर्थिक दासता से मुक्त करना होगा और उसे पढ़ा-लिखा कर योग्य बनाना होगा क्योंकि भारत जैसे देश की खुशहाली का बहुत बड़ा दारोमदार उनकी पैदावार बढ़ाने की क्षमता पर है। इसके लिए हमें खेतिहर मजदूर की मुश्किलें आसान करने के लिए कुछ ठोस उपाय करने होंगे।

इस दिशा म कोरी बातों से खेतिहर मजदूर का पेट नहीं भरेगा। इसके लिए एकमात्र उपाय यही है कि खेती से होने वाली आय को बढ़ाया जाय। हमें खेतिहर मजदूर के लिए और बड़ी चादर का इन्तजाम करना होगा तभी तो उसके आसरे पर पलने वाले लोग भी उस चादर पर अपने-अपने पांव पसार सकेंगे। खेती के क्षेत्र में नये जमाने के तरीके अपनाकर हम रोजगार के अवसर बढ़ा सकते हैं और उनके लिए बेहतर मजूरी की व्यवस्था कर सकते हैं। अतः खेतिहर मजदूर की काया पलटने के लिए यह जरूरी है कि हम अपने कार्यक्रम में खेती की उन्नति के चौमुखी प्रगति वाले कार्यक्रमों को प्रधानता दें।

अगर इस उपाय को और अधिक कारगर बनाना है तो हमें कुछ दूसरे ठोस और खास महत्व के कदम उठाने होंगे। हमें बन्धक मजूरी जैसी दासता को मिटाना होगा। खेतिहर मजदूरों के लिए कम-से-कम मजूरी तय करनी होगी और काम के घंटे आदि भी तय करने होंगे। जब खेती का सीज़न नहीं होता उस समय के लिए छोटे और घरेलू उद्योगों को फैलाकर उनके लिए काम जुटाना होगा। मजदूरों को अपनी निजी सहकारी समितियां बनाने के लिए बढ़ावा देना होगा ताकि वे अपने संगठित एवं सामूहिक प्रयास का लाभ उठा सकें। उनकी आर्थिक दशा में सुधार करने का एक और तरीका यह भी है कि भूमिहीन श्रमिकों को भूमि देकर उस पर बसाया जाए। खेतिहर मजदूरों को अत्याचार और मनमानी करने वाले जमींदारों और सूदखोरों के चंगुल में फंसने से बचाया जाये। उनके मन में तरक्की और कठोर परिश्रम के लिए आवश्यक 'आत्मबल' की भावना भर कर और उन्हें पढ़ा-लिखा कर उनमें ऐसी योग्यता पैदा की जा सकती है कि वे हीन-भावना के अपने पुराने जुए को अपने कन्धों से उतार कर फेंक सकें और वे युग-युगों से परेशान करने वाली अपनी भूख और कम रोजगार के मसलों और असाध्य बीमारियों का न सिर्फ डटकर मुकाबला कर सकें बल्कि उन पर सदा के लिए ही विजय भी प्राप्त कर सकें।

यह बड़े संतोष का विषय है कि सरकार खेतिहर मजदूरों की दशा सुधारने

(शेष पृष्ठ 27 पर)

गांवों में आवास-निर्माण की गति धीमी क्यों ?

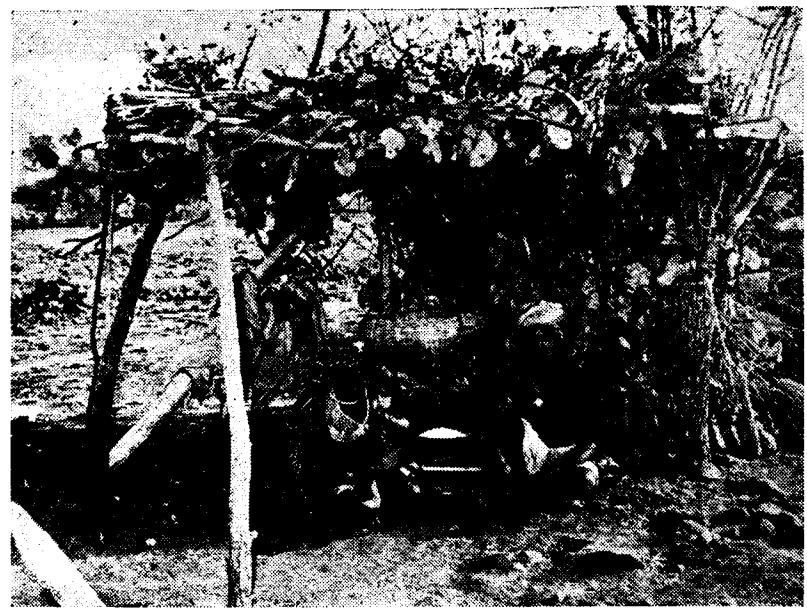

यही है इस बेचारे के रहने का ठिकाना

——देवकृष्ण व्यास

भारत में दो तिहाई ग्रामीण जनसंख्या घास-फूस के कच्चे मकानों में रहती है और 25 से 35 प्रतिशत शहरी लोग गन्दी बस्तियों में रहते हैं। केन्द्र और राज्य सरकारों के प्रयत्नों के बावजूद मकानों की आवश्यकता और उसकी पूर्ति के बीच भारी अन्तर है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ यह खाई निरन्तर बढ़ती जा रही है। एक अनुमान के अनुसार 4,000 करोड़ रु० प्रतिवर्ष यदि गृह-निर्माण पर खर्च किया जाए तो 20 वर्षों में यह समस्या हल हो सकती है।

छठी पंचवर्षीय योजना में आवास योजनाओं के लिए 1,538 करोड़ रु० की व्यवस्था की गई है। इसमें 500 करोड़ रु० ग्रामीण आवास योजनाओं के लिए हैं। पांचवीं पंचवर्षीय योजना की तुलना में यह राशि लगभग ढाई गुना अधिक है। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन और रिजर्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार 50 लाख मकान हर साल बनाने की जरूरत है। यदि इस रफ्तार से मकान बनते जाएं तो 20 साल में हम अपने सभी देशवासियों को आश्रय-स्थल प्रदान कर सकेंगे।

दिल्ली में पिछले दिनों आयोजित राज्यों के आवास मंत्री सम्मेलन में मांग की गई है कि आवास समस्या को पंचवर्षीय योजना में उच्च प्राथमिकता दी जाए और यह सर्वथा उचित भी है क्योंकि आज देश में ऐसे लाखों परिवार हैं जिनके पास सिर छुपाने के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं है। सम्मेलन में इस बात पर आम सहमति थी कि आवास समस्या को हल करने के लिए निजी क्षेत्र को भी प्रोत्साहित किया जाना चाहिए, क्योंकि यह समस्या इतनी विशाल है कि केवल सरकारी साधनों से इसका समाधान संभव नहीं है।

हमारे देश में ग्रामीण आवास की स्थिति बड़ी विकट है। देहातों में लोग पशुशालाओं के समान घरों में रहते हैं जहां न तो हवा आती है और न ही रोशनी। कई गांवों में तो मनुष्य और पशु साथ-साथ रहते हैं। आम तौर पर गांवों की सड़कें और रास्ते बहुत ही तंग तथा अव्यवस्थित होते हैं जिससे बरसात के दिनों में तो गांव नरक ही बन जाते हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण में सुधार के लिए विशेष ध्यान दिया जाए।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भारत के गांवों की स्थिति का बहुत बारीकी से अध्ययन किया था। उनकी कल्पना के आदर्श गांव में स्वच्छता के साथ-साथ ग्रामीणों की सुविधाओं का भी समावेश है। गांधीजी ने लिखा है: 'एक आदर्श भारतीय गांव का निर्माण इस तरीके से किया जाएगा जिससे उसमें पूर्ण स्वच्छता रहे। इसमें पांच मील के अन्दर उपलब्ध सामग्री से बने पर्याप्त रोशनी वाले और हवादार घर होंगे। घर के साथ-साथ आंगन होंगे जिन्हें काश्तकार साग, सब्जियां उगाने और अपने मवेशियों को बांधने के काम में लाएंगे। गांव की गलियां और सड़कें हर संभव धूल से रहित होंगी। इसमें आवश्यकतानुसार कुएं होंगे और जिनसे सब लोग पानी ले सकेंगे। इसमें सबके लिए कार्यशाला होगी। सार्वजनिक सभा-स्थल, मवेशियों के लिए चारागाह, एक सहकारी दुग्धशाला भी होगी, प्राथमिक और माध्यमिक स्कूल भी होंगे जिनमें मुख्यतः प्रारंभिक शिक्षा दी जाएगी और झगड़े निबटाने के लिए पंचायतें भी होंगी। यह अपने लिए स्वयं अनाज, साग-सब्जियों, और खादी का उत्पादन करेंगे।'

प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने भी आवास मंत्री सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए गांवों में पर्यावरण सुधार पर बल दिया। उन्होंने कहा कि ताजी हवा, धूप और पीने का स्वच्छ पानी बुनियादी आवश्यकताएं हैं। नगरों, कस्बों और गांवों में इन सुविधाओं को उपलब्ध करना मुख्यतः राज्य सरकारों और नगर पालिकाओं की

[illegible] में [illegible] है कि [illegible] सर्वेक्षण के अनुसार ऐसे समस्याग्रस्त गांवों की संख्या 1,53,000 थी जिनमें सुरक्षित पेय जल उपलब्ध नहीं था।

मकानों के निर्माण की गति धीमी होने का एक कारण यह भी है कि इमारती सामान—लोहा, सीमेंट, लकड़ी आदि के दाम तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। आजकल लोगों में यह गलत धारणा हो गई है कि लोहे और सीमेंट के बिना मकान बन ही नहीं सकता। पुराने जमाने में पत्थर, चूना और राखी से मकान बनाए जाते थे और उनकी मजबूती आजकल सीमेंट और लोहे से बनने वाले मकानों से बेहतर ही होती थी। प्रधानमंत्री ने यह सुझाव ठीक ही दिया है कि यदि स्थानीय उपलब्ध सामग्री का उपयोग किया जाए तो कम लागत में मकान बन सकते हैं। राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन ने मकानों की लागत कम करने के लिए परीक्षण करने के बाद उपयुक्त तकनीक का विकास किया है। केन्द्र सरकार ने सभी राज्यों को निर्देश दिए हैं कि वे इस नई तकनीक को अपनाएं और इसके व्यापक प्रचार के लिए राष्ट्रीय भवन निर्माण संगठन की सहायता से प्रदर्शन और प्रशिक्षण केन्द्र भी आयोजित करें।

आवास समस्या में भूमि का उचित दर पर उपलब्ध न होना भी एक बाधा है। केन्द्र और राज्य सरकारों ने हरिजनों, आदिवासियों एवं कमजोर वर्ग के अन्य लोगों को अवश्य निःशुल्क या रियायती [illegible] किया है। शहरों में भूमि के दाम निरन्तर बढ़ने के कारण मध्यम एवं निम्न आय के लोगों के लिए मकान हेतु प्लाट खरीदना लगभग असंभव हो गया है। केन्द्र और राज्य सरकारों ने सहकारी आवास समितियों के जरिए इन वर्गों को उचित दर पर प्लाट उपलब्ध करने की दिशा में कदम उठाए हैं पर ऋण की शर्तें सरल नहीं होने के कारण इनको इस सुविधा का पूरा लाभ नहीं मिल पा रहा है। आवास मंत्री सम्मेलन में कई राज्य सरकारों ने मांग की कि राष्ट्रीयकृत बैंकों को कमजोर वर्ग की आवास योजनाओं के लिए वित्तीय साधन सुलभ करना चाहिए।

शहरों में जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ मकानों के लिए भूमि की समस्या अत्यन्त गंभीर होती जा रही है। कई नगरों में स्थिति यह है कि हजार-हजार गज की बड़ी-बड़ी कोठियों में मुश्किल से चार-पांच व्यक्ति रहते हैं। समय की मांग है कि भूमि की तंगी को देखते हुए इस प्रकार के उपयोग पर अंकुश लगना चाहिए। सरकार ने शहरी भूमि सीमा कानून बनाकर इस दिशा में उचित कदम उठाया है। बम्बई की भांति बहुमंजिली इमारतें बनाकर प्रत्येक फ्लैट का स्वामित्व अलग-अलग व्यक्ति को दे दिया जाए तो समस्या काफी हल हो सकती है।

सरकार ने आवास समस्या हल करने के लिए आवास विकास निगम (हड़को) बनाया है। निस्सन्देह, इस निगम ने अब तक सराहनीय कार्य किया है किन्तु इसकी शर्तें अनुकूल नहीं होने के कारण राज्यों के आवास बोर्ड, सहकारी समितियां और अन्य एजेन्सियां पूरा लाभ नहीं उठा पा रही हैं। आवास मंत्री सम्मेलन में आम राय थी कि हड़को को कमजोर, निम्न और मध्यं आय वर्ग के लोगों को ऋण देने के लिए आय की निर्धारित सीमा में वृद्धि करना चाहिए। यह भी सुझाव दिया गया है कि हड़को को ऋण अदायगी की अवधि बढ़ानी चाहिए और ब्याज की दर कम करनी चाहिए।

आवास समस्या को हल करने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर योजनाबद्ध कदम उठाने की जरूरत है। प्रधानमंत्री और केन्द्रीय आवास मंत्री दोनों ने स्वीकार किया है कि इस समस्या के समाधान के लिए निजी क्षेत्र को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। करों के बोझ, किराया कानून की कुछ जटिल धाराओं, निर्माण लागत में वृद्धि और अन्य उद्योगों या विनियोगों की तुलना में आय कम होने के कारण लोग मकानों में पैसा कम लगाने लगे हैं। सरकार इन बाधाओं को दूर करने के बारे में गंभीरता से विचार कर रही है। निजी क्षेत्र को अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने के लिए तत्काल सक्रिय हो जाना चाहिए। केन्द्र और राज्य सरकारों तथा हड़को, आवास बोर्डों और अन्य एजेन्सियों में परस्पर सहयोग और ताल-मेल से ही यह विकट समस्या हल हो सकेगी। ●

—देवकृष्ण व्यास

सी-31, गुलमोहर पार्क
नई दिल्ली-110049।

> **एक अच्छा आदमी बनने के लिए सबसे बढ़िया नुस्खा यह है कि मम और तन को स्वस्थ रखा जाए।**
>
> **'बोवन'**

लघु उद्योग: रोजगार की संभावनाएं और ग्रामीण विकास

ओम प्रकाश शर्मा

देखो ! टोकरियां और पंखे बनाने में कितनी व्यस्त हैं

हमारे देश की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है। परन्तु कृषि का कुल राष्ट्रीय आय में समुचित अंश दृष्टिगोचर नहीं होता है। इस बारे में तर्क यह है कि यदि कृषि कार्य में व्यस्त 80 प्रतिशत जनसंख्या अपने जीविकोपार्जन का ही अन्न नहीं पैदा कर पा रही है तो प्रचलित पद्धति में किसी दोष का आभास होता है। गत 29 वर्षों में विकास की जो गति व ढांचा रहा है उससे हमारा देश विश्व के प्रमुख औद्योगिक देशों की गिनती में तो आ गया और आयात प्रतिस्थापन, उत्पादन तकनीक के विकास तथा निर्यात प्रोत्साहन की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति भी की है। परन्तु यह उपलब्धियां निरर्थक सिद्ध हुई क्योंकि बेरोजगारी और गरीबी की समस्या जहां की तहाँ बनी रही।

अनुमान लगाया गया कि भोजन में कैलोरी उपभोग के आधार पर 1977-78 के दौरान देश में गरीबों की संख्या लगभग 29 करोड़ है। इनमें से 16 करोड़ लोग ऐसे हैं जो निर्धनता स्तर से 75 प्रतिशत निचला जीवन गुजार रहे हैं। देश के सामने सबसे बड़ी समस्या बेरोजगारी की है। राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे के अनुसार देश में 41 लाख लोग ऐसे हैं जो साल भर बेरोजगार रहते हैं। 1 करोड़ 29 लाख लोग ऐसे हैं जिन्हें (राष्ट्रीय स्तर पर की गई नमूने की पड़ताल के अनुसार) पूरे सप्ताह काम नहीं मिला और 12 करोड़ 4 लाख लोग आंशिक रूप से बेरोजगार थे।

पहली श्रेणी के बेरोगारों में से 20 लाख ग्रामीण और 29 लाख शहरी क्षेत्रों में थे। दूसरे श्रेणी के 1 करोड़ लोग ग्रामीण व 29 लाख शहरी हैं। तीनों प्रकार के आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि 1972-73 में कुल बेरोजगारों की संख्या 2 करोड़ 4 लाख थी जिनमें से 1 करोड़ 75 लाख बेरोजगार गांव में रहते थे और 29 लाख शहरी थे। 1965 में देश में बेरोजगारों की कुल संख्या 1 करोड़ तेरह लाख आंकी गई थी। इस हिसाब से बोरोजगारों की संख्या में औसतन प्रतिवर्ष 5 लाख की वृद्धि हो रही है।

बेरोजगारी का राज्यवार विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि देश भर में जितने बेरोजगार हैं, उनमें से 67 प्रतिशत बेरोजगार तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, केरल तथा पश्चिमी बंगाल जैसे 6 राज्यों में है। यदि इस सूची में उत्तर प्रदेश को भी शामिल कर लिया जाए तो यह देश भर में कुल बेरोजगारी का दो तिहाई यानी 73.50 प्रतिशत भाग इन राज्यों में बैठता है। पहले 6 राज्यों में औसतन बेरोजगारी दर 10 प्रतिशत है जिसमें केरल की बेरोजगारी दर 25 प्रतिशत, सबसे अधिक है। अतः रोजगारउन्मुखी योजना इन सात राज्यों में प्राथमिकता के आधार पर तुरन्त क्रियान्वित की जानी चाहिए।

बेरोजगारी की भंयकर स्थिति से निपटने के लिए रोजगार सम्बधी नीति में तीन आधारभूत बातों का ध्यान रखा जाना आवश्यक है (1) विकास की अधिकतम गति बनाए रखना (2) अधिकाधिक श्रमिकों की मांग से मुक्त उत्पादन ढाँचा तैयार करना (3) टैक्नोलाजी में हुई प्रगति को रोजगार वृद्धि का एक निश्चित स्तर बनाए रखने के लिए प्रयुक्त करना।

गांवों से शहरों की ओर

अब ग्राम विकास के जितने कार्यक्रम आरम्भ किए गए उनका कुल मिलाकर परिणाम यह हुआ कि गांवों में अमीर-गरीब के बीच की दूरी बढ़ी और ग्रामीण क्षेत्रों में भी क्षेत्रीय असंतुलन बढ़ा है। ग्रामों में आधुनिक टैक्नोलाजी के पहुंचने का परिणाम यह रहा है कि वहां रोजगार की सम्भावनाएं कम होती जा रही हैं। अनुमान है, कि इस दशाब्दि के अन्त तक गांवों से एक से सवा करोड़ तक लोग शहरों की ओर आने लगेंगे। शहरी और देहाती आबादी का अनुपात 1 और 5 है। लेकिन पूर्ण रूप से बेरोजगार रहने वालों की संख्या गांव और शहरों में लगभग बराबर है।

इससे स्पष्ट है कि गांवों से शहर में आने वाले लोगों को यहां उससे भी बुरे हाल में रहना पड़ता है। शहरों में इतनी अधिक रोजगार सम्भावनाएं नहीं हैं जिससे कि सभी बेरोजगारों को रोजगार दिया जा सके। 1975-76 में सार्वजनिक क्षेत्र में रोजगार सम्भावनाओं में 3.3 प्रतिशत और निजी क्षेत्र में केवल 4.6 प्रतिशत की ही वृद्धि हो सकी।

[illegible] ग्रामीण विकास का ग्रामीण लघु उद्योगों से घनिष्ट सम्बन्ध है। इसको स्पष्ट करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि लघु उद्योग क्या है? लघु उद्योग की परिभाषा समय व क्षेत्र की सीमाओं के साथ-साथ बदलती रहती है। वर्तमान परिभाषा के अनुसार "जिस उद्योग में प्रारम्भिक व्यय 10 लाख रुपए से अधिक न हो, उसे लघु उद्योग कहा जाता है।" लेकिन ग्रामीण विकास के लिए इस परिभाषा को स्वीकार करके गांव के बढ़ई, लुहार आदि ग्रामीण तकनीसियनों को नये उद्योगपतियों की लाइन में खड़ा नहीं किया जा सकता। इसके लिए 5 लाख रुपए में या इससे कम की पूंजी वाले उद्योगों को लघु उद्योग माना जाना चाहिए।

हमारे ग्रामों का जीवन मात्र कृषि तक ही सीमित रहा है। परन्तु अब समय आ गया है कि कृषि को हलवाही की दासता से मुक्त किया जाना चाहिए। आधुनिक समाज द्वारा सुविधाओं का प्रयोग ग्राम व कृषि विकास के लिए किया जाना चाहिए। ग्रामीण जीवन में प्रगतिशील परिवर्तन हेतु ऐसे कार्यों का निर्वाचन किया जाए जिसको कृषक एवं दस्तकार पूर्णकालिक उद्योग के रूप में अपना सकें। ग्रामों में बेरोजगार श्रमशक्ति को अपनी बुनियादी आवश्यकता की वस्तुएं तैयार करने को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यदि 70 प्रतिशत ग्रामीण जनता अपनी आवश्यकताएं स्वयं पूरी कर लेगी तो इससे बड़ा लाभ यह होगा कि गांवों की पूंजी गांवों में ही कल्याण और विकास कार्यों में निवेशित हो सकेगी। सरकार सड़क निर्माण, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार, वृक्षारोपण आदि कार्यक्रम आरम्भ करके भी आंशिक रोजगार की व्यवस्था कर सकती है।

इसके अतिरिक्त पूर्णकालिक उद्यम के रूप में मुर्गीपालन, दुग्ध व्यवसाय, सुअर पालन एवं वनस्पति उत्पादन को भी प्रोत्साहित किया जा सकता है। इन उद्यमों के लिए भूमि की भी बहुत कम आवश्यकता होगी साथ ही कई उद्यम एक साथ भी लग सकते हैं। ग्रामों की खेतिहर भूमि का सर्वोत्तम प्रयोग हो सकेगा। यह नवीन उद्यम कृषि के समानान्तर ही सिद्ध होंगे, क्योंकि इनमें लगे लोग कृषकों की अपेक्षा अधिक धनोपर्जन कर सकेंगे।

भूमि वितरण के आधार पर ग्रामीण जनता को निम्न तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है:—(1) दो एकड़ से कम भूमिधारी (2) दो एकड़ से दस एकड़ तक भूमिधारी (3) दस एकड़ से अधिक भूमिधारी। प्रथम श्रेणी के लोगों के लिए सुविधाजनक है कि वे अपने जीवन में परिवर्तन के प्रति अपनी भावनाओं को परिवर्तित करें। द्वितीय श्रेणी के व्यक्ति कृषि कार्य में भी लाभ प्राप्त कर सकते हैं, लेकिन उन्हें कृषि यंत्रों की सेवाओं की आवश्यकता होगी।

उनके लिए खाद आदि कृषि सम्बन्धी आवश्यकताओं के साथ-साथ सुविधाओं को भी उपलब्ध कराना चाहिए। तभी इस श्रेणी के कृषक कृषि उत्पादन में वृद्धि करने में समर्थ हो सकेंगे। साथ ही धीरे-धीरे जब प्रथम श्रेणी के भूमिधारी नए उद्यमों को स्वीकार लेंगे तो उनकी भूमि कृषि के लिए उपलब्ध हो सकेगी।

सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध क्षेत्रों में 10 एकड़ से अधिक के भूमिधारी स्वयं साधन सम्पन्न होंगे। परन्तु इनमें भी साख-संस्थाओं व मशीनों की मरम्मत हेतु कार्यशालाओं की आवश्यकता होगी।

उपरोक्त समस्त सुविधाएं एक ही स्थान पर उपलब्ध कराई जानी चाहिएं, जिन्हें ग्रामीण विकास केन्द्र का नाम दिया जा सकता है। यह केन्द्र विभिन्न श्रेणियों के ग्रामीणों को उपरोक्त समस्त सुविधाएं उपलब्ध कराएंगे। साथ ही उपभोग्य सामग्रियों को वर्तमान स्थिति से अधिक सुचारू रूप से अधिकाधिक उपभोक्ताओं को उपलब्ध करा सकेंगे।

इस तरह ग्रामीण विकास केन्द्र ग्रामीण उद्योगों के विकास हेतु उपयुक्त प्राकृतिक एवं युक्तसंगत आधार का निर्माण करेंगे तथा ग्रामीण दस्तकारों को भी उनके योग्य, अवसर प्रदान करेंगे। इस प्रकार इनके माध्यम से लघु उद्योगों को विकसित करके अधिक रोजगार उपलब्ध कराया जा सकेगा तथा ग्रामों का यथासम्भव विकास किया जा सकेगा। ●

प्रवक्ता, समाजशास्त्र विभाग
धर्म समाज कालिज,
अलीगढ़ (उ० प्र०)

जब साहस ने ✻ आजाद रामपुरी

जब साहस ने श्रम के द्वारे,
विश्वासों के बिगुल बजाए।
तब परिवर्तन ले अंगड़ाई,
न सृजन के साज सजाए।।

(1)

अन्तर्मुखी छिपी अभिलाषा,
फलीभूत हो बनी सफलता।,
कर्म-शक्ति की खिली चन्द्रिका.
खुशियों की बिक गई धवलता।।
साधन-पथ पर जब निष्ठा की,
बल-पौरुष डोली बन जाए।
तब प्रगति के सजे भवन में,
विजय श्री नव वधू लजाए।।

(2)

उद्यम भी हो जाए प्रतिष्ठित,
पग-पग पर हो क्रिया-अर्चना।
भू पर तब मधुमास उतरता,
पृष्ठ-पृष्ठ पर लिखी सर्जना।।
आस्था-दीप जलाकर यदि जब,
त्याग-भाव पूजित हो जाए
कथनी को करनी में बदलें,
उपलब्धि प्रसाद दे जाए।।

—आजाद रामपुरी
ललितपुर कालोनी, ग्वालियर-474009

उत्तर प्रदेश में चौमुखी प्रगति का लेखा-जोखा

कृष्ण कुमार

सरकार का लक्ष्य है गरीबी की रेखा को मिटाना। राज्य के सारे कार्य-कलाप इस केन्द्र बिन्दु के चारों ओर घूम रहे हैं। गरीबी की रेखा के नीचे रहने वालों की जनसंख्या इस समय 67 प्रतिशत तक पहुंच गई है जबकि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय यह लगभग 48 प्रतिशत ही थी। जनता के रहन-सहन का स्तर ऊंचा करने के लिए हमें भागीरथ प्रयत्न करने होंगे। लोगों को गरीबी की रेखा से पार कराने के लिए लघु और कुटीर उद्योगों तथा श्रम प्रधान उद्योगों की स्थापना करनी होगी। नई टैक्नालोजी को और अधिक सक्रियता से लागू करने के लिए प्रति हैक्टेयर पैदावार और बढ़ाकर और नए उद्योग स्थापित कर जन-संख्या को गरीबी की रेखा से पार कराया जा सकता है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उत्तर प्रदेश की राज्य सरकार ने यह निर्णय किया है कि इन लोगों को जिनकी वार्षिक आमदनी दो हजार रुपये तक है अन्त्योदय परिवार के अन्तर्गत माना जायेगा और उनको अपना जीवन स्तर ऊंचा उठाने के लिए वित्तीय तथा अन्य विशेष सहायता सुलभ की जाएगी। इस उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए राज्य में गरीबी को दूर करने और जनसंख्या के कमजोर वर्गों का जीवन यापन स्तर ऊंचा उठाने के लिए राज्य सरकार की ओर से अनेक पग उठाए गए हैं।

कृषि प्रधान राज्य उत्तर प्रदेश की ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए राज्य सरकार ने अपनी नई कृषि नीति के अनुरूप किसानों को राहत पहुंचाने के साथ सम्पूर्ण कृषि कार्यक्रम को एक नया मोड़ दिया है। सर्वप्रथम सरकार ने जमींदारी उन्मूलन अधिनियम में संशोधन करके पहली जुलाई, 1977 से 3-1/8 एकड़ तक की जोत वाले किसानों की मालगुजारी माफ कर दी है, जिससे राज्य के लगभग 70 प्रतिशत किसानों को लाभ पहुंचा। इसके अलावा, इसमें ऊपर की जोतों पर भूमि विकास कर को भी समाप्त कर दिया गया। किसानों को दी गई इन सुविधाओं के फलस्वरूप, सरकार को लगभग 34 करोड़ रुपए का भार वहन करना पड़ा है। राजस्व सम्बन्धी कानूनों और राजस्व अदालतों की प्रक्रिया को सरल बनाने के उद्देश्य से वर्तमान 19 राजस्व सम्बन्धी अधिनियमों को निरस्त कर राजस्व संहिता बनाई गई है ताकि किसानों को राजस्व सम्बन्धी कानूनों की जानकारी सरलता से हो सके और इससे वे उक्त जटिल प्रक्रियाओं से मुक्त हो सकेंगे।

किसानों की दिक्कतों को दूर करने के बाद कृषि उत्पादन को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। इसके लिए किसानों को समय पर बीज, खाद, पानी, कीटनाशक दवाइयां सप्लाई करने की दिशा में उचित कदम उठाए गए हैं। राज्य में बीज प्रामाणीकरण एजेन्सी का गठन किया गया है और राज्य के विभिन्न नगरों अर्थात् आगरा, अलीगढ़, इलाहाबाद, वाराणसी, गोरखपुर, बरेली, मऊरानी (झांसी), खैराबाद (सीतापुर) और रहीमाबाद (लखनऊ) में 11 बीज शोधन संयंत्र स्थापित किए गए हैं।

राज्य सरकार ने प्रदेश में रासायनिक खाद का प्रयोग बढ़ाने के लिए पोटाश और फास्फेट पर 20 प्रतिशत से 30 प्रतिशत तक सहायक अनुदान दिया है जिससे सरकार को लगभग तीन करोड़ रुपए का भार वहन करना पड़ेगा। केन्द्रीय सरकार ने भी यूरिया के मूल्य में 100 रुपए प्रति क्विंटल की कमी कर दी है। इसके परिणामस्वरूप राज्य में इस वर्ष 8.60 लाख टन उर्वरकों की खपत हुई है जबकि पिछले वर्ष 1976-77 में 7.24 लाख टन उर्वरकों का उपयोग हुआ था। इसके अलावा, राज्य के कृषि विभाग की तकनीकी देख-रेख में 558 में से 434 नगर-पालिकाएं अच्छी किस्म का कम्पोस्ट भी तैयार कर रही हैं। कृषि पैदावार बढ़ाने के लिए अच्छे बीजों और उर्वरकों की व्यवस्था करना बहुत ही जरूरी होता है लेकिन सिंचाई की व्यवस्था न होने से सारी मेहनत बेकार हो जाती है। राज्य सरकार ने इस दिशा में भी पूरा-पूरा ध्यान दिया है। वर्ष 1977-78 के दौरान राज्य में विभिन्न माध्यम और लघु सिंचाई योजनाओं तथा राजकीय नलकूपों द्वारा 7.36 लाख हैक्टेयर सिंचन क्षमता की वृद्धि की गई है। 1977-78 में 1,400 राजकीय नलकूप लगाए गए जबकि पिछले वर्ष केवल 400 नलकूप लगे थे। इस वर्ष राजकीय सिंचाई साधनों से 19.95 लाख हैक्टेयर भूमि में खरीफ में और 36.97 लाख हैक्टेयर के लगभग क्षेत्र में रबी में सिंचाई की गई है।

सरकार द्वारा अपनाए गए विभिन्न उपायों के फलस्वरूप इस वर्ष खरीफ में अब तक का

प्राप्त किया गया है जबकि 1976-77 में 72 लाख टन ही हुआ था। रबी का उत्पादन 128.30 लाख टन होने का अनुमान है। वर्ष 1977-78 के दौरान खाद्यान्नों का कुल उत्पादन 206.70 लाख टन होने का अनुमान है जोकि कृषि उत्पादन के इतिहास में एक नई क्रान्तिकारी घटना होगी। राज्य सरकार ने 1978-79 में 215 लाख टन खाद्यान्न उत्पादन का महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित किया है।

राज्य की प्रमुख नकदी फसल गन्ना है। गन्ना उत्पादकों के हितों की भी सुरक्षा की गई। उन्हें उनकी पैदावार का उचित मूल्य दिलाने के लिए सरकार ने चीनी मिल मालिकों की सहमति से गन्ने के मूल्य में 25 पैसे प्रति क्विंटल की वृद्धि करके 22 लाख गन्ना उत्पादकों को लगभग 4 करोड़ रुपए का अतिरिक्त लाभ पहुंचाया है। यह मूल्य पश्चिमी और मध्य क्षेत्रों में 13.50 रुपए और पूर्वी क्षेत्रों में 12.50 रुपए प्रति क्विंटल दिलाया गया था। खंडसारी इकाइयों द्वारा देय गन्ने के मूल्य में 20-40 पैसे प्रति क्विंटल की वृद्धि की गई है। गन्ने के मूल्य के 12.22 करोड़ रुपए के पुराने बकायों में से 10 करोड़ से भी अधिक राशि का भुगतान करा दिया गया है। इस वर्ष गन्ने का रिकार्ड उत्पादन हुआ। किसानों का सारा गन्ना पेरा जाए, इस सम्बन्ध में सरकार ने चीनी मिलों को स्पष्ट निर्देश दिए कि सारे गन्ने की पिराई पूरी होने तक मिलें बन्द न की जाएं। इसके परिणाम स्वरुप, राज्य में 17.00 लाख टन चीनी का रिकार्ड उत्पादन हुआ था।

राज्य सरकार की नई औद्योगिक नीति का उद्देश्य राज्य की अर्थ-व्यवस्था का संतुलित विकास करना, रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध कराना तथा क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करना है। इस नीति के अनुसार पिछले एक वर्ष के दौरान राज्य में श्रम प्रधान और ग्रामीण उद्योगों पर सबसे अधिक बल दिया गया है। इस नीति के अधीन छोटे ग्रामीण तथा कुटीर उद्योगों के लिए ऐसी वस्तुओं का आरक्षण किया गया है जिनका उत्पादन इनमें किया जा सके। छोटी और ग्रामीण इकाइयों को विशेष सुविधाएं और इन इकाइयों को ग्रामीण अंचलों में स्थानान्तरित करने के लिए प्रोत्साहन दिया गया तथा अधिक रोजगार वाली इकाईयों को प्राथमिकता दी जा रही है।

लघु-औद्योगिक इकाइयों की स्थापना करने के व्यापक कार्यक्रम के अधीन जहां गत वर्ष 2,100 नई इकाइयां स्थापित की गईं वहां इस वर्ष 1977-78 में 4,000 स्थापित की जाएंगी जिनसे 60,000 लोगों को रोजगार मिलेगा। जिन नगरों की जनसंख्या 50 हजार से कहीं कम है वहां अधिक से अधिक लोगों को लघु और कुटीर उद्योग लगाने के लिए प्रोत्साहन देने की योजना लागू की गई है। इस योजना के अन्तर्गत राज्य के सभी जिलों में विकास केन्द्र चुने जाएंगे। जिन इकाइयों में मशीनों और संयंत्रों की लागत एक लाख रुपये तक होगी उन्हें विशेष प्रोत्साहन दिया जाएगा। राज्य में बहुत अधिक संख्या में हस्तशिल्प अभिकरण और विकास केन्द्र स्थापित किए जा रहे हैं तथा खादी ग्रामोद्योग बोर्ड के आधार को सुदृढ़ किया जा रहा है। हथकरघा उद्योग को प्राथमिकता दी गई है। बुनकर सहकारी समितियों को कार्य-पूंजी के लिए अब तक 1.70 करोड़ रुपये की सहायता उपलब्ध की गई है।

उद्योगों में जब तक मजदूर—मालिक सम्बन्ध सौहार्दपूर्ण नहीं होते हैं तब तक उनका यथेष्ट स्तर तक विकास नहीं हो पाता है। मजदूर उद्योगों की रीढ़ की हड्डी के समान होते हैं जिनके बिना उद्योग पंगु होता है। वर्तमान सरकार ने श्रमिकों के कल्याण के लिए पिछले एक वर्ष में अनेक ऐसे कदम उठाए हैं जिनसे श्रम कल्याण कार्यों को एक नई दिशा मिली है और श्रमिकों को अपना आर्थिक तथा सामाजिक स्तर ऊपर उठाने में मदद मिली है। आज मजदूर अपने आप को पहले की अपेक्षा अधिक सुखी और सम्मानजनक स्थिति में पाता है। श्रमिकों को नियोजन न मिलने की दशा में वर्ष में 45 दिनों तक के लिए विनियुक्ति भत्ता उनके वेतन के 25 प्रतिशत के बराबर देने की व्यवस्था की गई है। इससे मजदूरों को बेरोजगारी के दिनों में परिवार के भरण-पोषण करने में काफी सहायता मिलेगी। श्रमिकों का शोषण न हो, इस उद्देश्य से राज्य सरकार ने औद्योगिक प्रतिष्ठानों में नियमित कार्यों के लिए ठेकेदारों के माध्यम से श्रमिकों की नियुक्ति करने की प्रथा को समाप्त कर दिया है। बिना वेतन के अप्रेन्टिस ट्रेनिंग का नियोजन अब समाप्त कर दिया गया है। उत्तर प्रदेश सरकार श्रमिकों के लिए प्रत्येक सुविधा की ओर ध्यान दे रही है। राज्य में श्रमिकों के लिए अब तक कुल 29,991 श्रमिक गृहों का निर्माण किया जा चुका है। 652 और नये मकानों का निर्माण किया जा रहा है।

निस्सन्देह यह हमारे लिए शर्म की बात है कि स्वतन्त्रता के 31 वर्ष के बाद भी राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के दिशा निर्देश और राष्ट्र के कर्णधारों के सतत प्रयास के बावजूद हम हरिजनों और निर्बल तथा कमजोर वर्गों के लोगों को सच्चे अर्थों में बराबरी का दर्जा देने का दावा नहीं कर सकते हैं। राज्य सरकार ने इन कमजोर, शोषित तथा दबे-थके लोगों के शैक्षिक, आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिए अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम शुरू किए हैं। वित्तीय वर्ष 1978-79 में इन कार्यक्रमों के लिए 22.5 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है। अनुसूचित जनजातियों की आर्थिक दशा में सुधार के कार्य में तेजी लाने के लिए तीन अलग-अलग निगमों—तराई अनुसूचित जनजाति निगम, कुमाऊं अनुसूचित जनजाति निगम और गढ़वाल अनुसूचित जनजाति निगम की स्थापना की गई है।

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में रहने वाले हरिजनों तथा निर्बल वर्ग के लोगों के लिए मकान बनवाने, हरिजनों तथा अन्य कमजोर वर्गों को ग्रामों में पेय जल की सुविधा सुलभ कराने, राज्य के गरीब वर्गों की आर्थिक दशा सुधारने, हरिजन छात्रों तथा निर्बल वर्ग के छात्र छात्राओं के लिए छात्रावास बनवाने और पिछड़ी जातियों के लोगों को सरकारी नौकरियों में उचित स्थान देने की दिशा में अनेक कल्याणकारी कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। राज्य सरकार हरिजनों, पिछड़ी जातियों तथा अन्य निर्बल वर्गों को पूर्ण सुरक्षा करने और उनका आर्थिक शैक्षिक तथा सामाजिक स्तर ऊपर उठाने के लिए कटिबद्ध है ताकि ये लोग एक सम्मानजनक जीवन बिता सकें।

राज्य सरकार ने शिक्षा के सभी क्षेत्रों में विकास और गुणात्मक सुधार पर विशेष

बल दिया है। साधनों की कमी के बावजूद पिछले एक वर्ष में ही 3,162 प्राइमरी और 812 मिडिल स्कूल खोले गए है जबकि पांचवीं योजना के पहले तीन वर्षों में केवल 2,574 स्कूल खोले गए थे। प्राथमिक शिक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है तथा इस प्रयोजन से वर्ष 1978-79 में इसके लिए शिक्षा विभाग के कुल बजट का 52 प्रतिशत धन निर्धारित किया गया है जोकि इससे पहले कभी नहीं हुआ था।

राज्य में प्रत्येक न्याय पंचायत केन्द्र पर एक अनौपचारिक प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र स्थापित किया गया है। ये केन्द्र 8,920 स्थानों पर 15 से 45 वर्ष के आयु वर्ग के लोगों को साक्षरता प्रदान कर रहे हैं। आगामी छठी पंचवर्षीय योजना में इस योजना को और अधिक व्यापक बनाया जाएगा तथा प्रत्येक ग्राम सभा में एक केन्द्र की स्थापना की जाएगी। राज्य सरकार इस बात के लिए प्रयत्नशील है कि राज्य में 15 से 25 वर्ष की आयु वर्ग के डेढ़ करोड़ लोगों को आगामी 10 वर्षों में साक्षर बनाया जाए।

सामान्य जनता को दैनिक उपभोग की आवश्यक वस्तुएं अपेक्षित मात्रा में और उचित दामों पर बिना किसी कठिनाई के प्राप्त हो सकें तथा वितरण व्यवस्था में किसी प्रकार की कठिनाई न आने पाये, इसके लिए राज्य सरकार ने सब से पहले सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अभिनवीकरण की दिशा में सक्रिय तथा प्रभावशाली कदम उठाए। वितरण व्यवस्था की देख-रेख के लिए पूरे राज्य में तहसील स्तर तक खाद्यान्न समितियों तथा कमीशन एजेन्टों की भण्डारण सीमा नियन्त्रित की गई, मूल्यों में बढ़ोतरी पर निगाह रखने के लिए राज्य मूल्य मानीटरिंग समिति का गठन किया गया, सस्ते अनाज की दुकानों की जांच नये सिर से की गई और जाली राशन कार्डों की चैकिंग कर उन्हें रद्द किया गया। वितरण व्यवस्था को सुचारू बनाने के लिए दुकानदारों की व्यावहारिक कठिनाइयों को दूर किया गया तथा दुकानों के खुलने और बन्द होने के समय को बढ़ाकर जनता को राहत पहुंचाई गई। दुकानों पर मूल्य सूची लटकाना अनिवार्य कर दिया गया। शहरी क्षेत्रों की भांति ग्रामीण क्षेत्रों में भी यूनिटों के आधार पर नये राशन कार्ड बनाकर दिए गए। गांवों में राशन की सुविधा शहरों की तरह उपलब्ध हो गयी है। खाद्यान्नों की भांति सीमेन्ट के वितरण में आंशिक नियन्त्रण लागू कर सुधार किया गया जिससे हर एक को अपनी जरूरत लायक सीमेन्ट बिना किसी कठिनाई के प्राप्त होने लगा है। लेकिन अधिक सीमेन्ट के लिए परमिट की प्रणाली को जारी रखा गया है।

इन प्रभावशाली उपायों के फलस्वरूप खाद्यान्नों तथा आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों की स्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है। इन वस्तुओं के मूल्यों को केवल बढ़ने से रोकने में सफलता मिली है बल्कि खाद्यान्नों तथा आवश्यक वस्तुओं के मूल्य में तेजी से गिरावट आनी शुरू हो गयी है। बाजार में आज आवश्यक वस्तुओं की पर्याप्त उपलब्धि है।

उपर्युक्त सभी कार्यक्रमों को चलाने के लिए एक स्वच्छ और भ्रष्टाचार रहित तथा कुशल प्रशासन की आवश्यकता होती है। राज्य सरकार भ्रष्टचार का उन्मूलन करने के लिए कृत संकल्प है और उसने इस दिशा में अनेक महत्वपूर्ण कदम भी उठाए हैं। इस बात को ध्यान में रखकर कि भ्रष्टाचार हमेशा ऊपर से ही नीचे आता है, सरकार ने मंत्रियों, उप/राज्य मंत्रियों, विधान सभा और विधान परिषद् के सदस्यों तथा राज्य सरकार के उच्च पदों पर आसीन सरकारी अधिकारियों तथा निगमों, स्थानीय निकायों, जिला परिषद् आदि के अधिकारियों के विरुद्ध शिकायत प्राप्त होने पर जांच के लिए एक अवकाश प्राप्त मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति लोकायुक्त के पद पर की जिन्होंने 14 सितम्बर, 1977 से कार्यभार सम्भाल लिया था। विभिन्न विभागों में भ्रष्टाचार मिटाने के लिए प्रशासन के उच्च अधिकारियों को इसकी जिम्मेदारी सौंपी गई है और प्रत्येक स्तर पर जनता की कठिनाइयों को सुनने तथा उनका समाधान शीघ्र करने के लिए प्रयत्न किए जा रहे हैं। इससे जनता और प्रशासन के बीच घनिष्ठता स्थापित हुई है और भय तथा अविश्वास के स्थान पर विश्वास और उत्तर दायित्व की भावना पैदा हुई है।

राज्य सरकार ने अन्त्योदय की अपनी नीति को मूर्त रूप देने के लिए सैद्धान्तिक रूप से यह भी स्वीकार किया है कि नियोजन कार्य निचले सिरे से आरम्भ होना चाहिए और स्थानीय आवश्यकताओं और उपलब्ध सुविधाओं के अनुरूप योजनाएं तैयार की जानी चाहिएं। इससे जनता को अपने उन्नयन और उत्थान के लिए शासन द्वारा दिए जाने वाले कार्यों में अपना सक्रिय सहयोग देने का अवसर मिलेगा।

सारांश में, सरकार ने इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किसानों, मजदूरों, हरिजनों तथा समाज के निर्बल और कमजोर वर्गों, उपभोक्ताओं के हितों की सुरक्षा करने के लिए अपनी सारी योजनाएं बनायी हैं। सरकार जनता की महत्वाकांक्षाओं को पूरा करने के लिए प्रत्येक सम्भव कोशिश कर रही है। लेकिन आज भी हम अन्त्योदय के लक्ष्य से बहुत दूर है। कारण स्पष्ट है कि कमी कोई भी सरकार एक वर्ष में पूरा नहीं कर सकती है। फिर भी प्रगति काफी संतोषजनक है। लेकिन यह कार्य जनता के सहयोग के बिना पूरा नहीं हो सकता है। ●

संयुक्त राष्ट्र द्वारा बच्चों के अधिकारों की घोषणा 1979

1. जब तक संभव हो अपने बच्चे को मां का दूध पिलाओ।
2. जब चार महीने का हो, तो उसे हल्का-फुल्का खाना दो।
3. दिन में बच्चे को पांच-छः बार खिलाओ।
4. यदि बच्चा बीमार हो तो खिलाते-पिलाते रहो और खूब पानी पिलाओ। खास कर तब, जब उसे पेचिश की शिकायत हो।
5. बीमारी की अवस्था में करीब के स्वास्थ्य-केन्द्र से शीघ्र ही सहायता प्राप्त करो।
6. अपने बच्चे को रोग-मुक्ति का टीका लगवाओ।
7. खाने से मक्खियों को दूर रखो।
8. खिलाने पिलाने से पहले बच्चे के हाथों को साफ करवाओ।
9. बच्चों को साफ-स्वच्छ पानी पीने को दो।
10. दो या तीन से अधिक बच्चे पैदा न करो।
11. दो बच्चों के जन्म में दो से तीन वर्ष का अन्तर हो। ●

राजस्थान में श्वेत क्रान्ति

ग्रामीण दूध बेचते हुए

"हरित क्रांति" के साथ राजस्थान में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने का एक और सुदृढ़ आधार तैयार किया जा रहा है। राज्य के किसानों को खेती से होने वाली आय के अलावा, दूध के विक्रय से पूरक आय का एक और स्रोत सुलभ करना ही यह आधार होगा जिससे राज्य में "श्वेत क्रांति" लाई जा सके।

गांव-गांव में पशु पालकों के यहां से अब क्षेत्रीय दुग्ध सहकारी समितियों के कार्यकर्ता दूध एकत्रित करते हैं। एकत्रित दूध के मूल्य के रूप में वर्तमान में इन पशु पालकों को प्रतिदिन लगभग 3 लाख रुपये मिल रहे हैं जिसकी वार्षिक राशि 11 करोड़ रुपये होती है। श्वेत क्रांति के पूर्ण हो जाने पर राज्य के कोई 5 लाख ग्रामीण परिवारों को प्रति-वर्ष कुल मिलाकर 80 से 100 करोड़ रुपये की सालाना आय होने लगेगी।

1972 की पशु गणना के अनुसार राज्य में लगभग 4 करोड़ पशु है। पशुधन की संख्या की दृष्टि से देश में राज्य का तीसरा स्थान है जबकि दुग्ध उत्पादक पशुओं की दृष्टि से छठा। समग्र देश के दुधारु पशुओं की 7 प्रति-शत संख्या राजस्थान में है जो देश के कुल दुग्ध उत्पादन का दसवां भाग उत्पन्न करते हैं। देश में प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धि का प्रतिशत 180 ग्राम है जबकि राज्य में यह मात्रा प्रति व्यक्ति 270 ग्राम है।

इससे स्पष्ट है कि राज्य में दुग्ध उत्पादन के विकास की पर्याप्त संभावनाएं हैं, किन्तु दुग्ध उत्पादन को यहां के पशु-पालकों द्वारा कभी व्यापक आधार पर नहीं अपनाया जा सका। दूर-दराज के गांवों में रहने वाले पशु-पालकों के लिए पहले यातायात व बाजार की सुविधाएं नहीं थीं। इससे ये लोग प्रायः घर पर ही उत्पादित दूध को घी में बदल लेते थे जिससे उन्हें प्रति एक लीटर दूध से मात्र 80 पैसे की आय होती थी। इतनी कम आय के कारण किसी दुग्ध उत्पादक को यह भान तक नहीं हो पाता था कि दुग्ध उत्पादन उसकी आय का एक प्रभावी साधन बन सकता है।

—के० पी० अरोरा

श्वेत क्रान्ति के सूत्रपात से पहली बार राज्य के 70 प्रतिशत लघु एवं सीमांत किसान पशुपालकों में व अन्य पशुपालकों में यह विश्वास पनपा है कि दुग्ध उत्पा-दन को व्यावसायिक स्तर पर अपनाना चाहिए। उन्हें प्रेरणा मिली है अपने पशुओं की नस्ल सुधारने, उनको संतुलित आहार खिलाने और उन्हें रोग मुक्त रखकर दूध की मात्रा में वृद्धि करने की ताकि इस साधन से आय में बढ़ोतरी हो सके।

श्वेत क्रांति के वर्तमान अभियान को प्रारम्भ हुए लगभग तीन वर्ष ही हुए हैं, परन्तु इस छोटी सी अवधि में भी उल्लेखनीय परिणाम सामने आए हैं। इनसे प्रेरित होकर राज्य में अब स्थान-स्थान पर दुग्ध-अवशीतन-केन्द्र तथा दुग्ध वितरण परियोजनाओं का एक जाल सा बिछता जा रहा है। दुग्ध संकलन कार्य को सहकारी क्षेत्र के अन्तर्गत सम्पादित किया जा रहा है। दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों की

तेजी से हुई प्रगति को ध्यान में रखकर अक्टूबर, 77 में 13 सदस्यीय संचालक मंडल युक्त राजस्थान सहकारी डेयरी संघ लिमिटेड का गठन किया गया है--

राज्य में श्वेत क्रांति का कार्यक्रम वस्तुतः गुजरात की प्रसिद्ध अमुल योजना के आदर्श पर ही है। खेड़ा जिला दुग्ध उत्पादन सहकारी समिति की "अमुल" योजना के अन्तर्गत विभिन्न गांवों के दुग्ध उत्पादकों से दूध एकत्र किया जाता है, समिति का निजी फार्म है, जहां पर पशु नस्ल सुधार आहार व रोग निदान की सम्पूर्ण व्यवस्था वैज्ञानिक आधार पर की जाती है। यह समिति उत्पादन, विक्रय एवं विपणन को सम्पादित करती है। इसी आधार पर राज्य में राजस्थान कोआपरेटिव डेयरी फेडरेशन की स्थापना इसी वर्ष (1978) में की गई है। यह महासंघ डेयरी संयंत्रों व दुग्ध पदार्थों की वितरण व्यवस्था एवं संघों द्वारा दुग्ध संकलन, उत्पादन वर्धन कार्यक्रमों की व्यवस्था देखेगा।

राज्य में श्वेत क्रांति के कार्य को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से, वित्तीय स्रोतों के लिए विभिन्न योजनाओं के माध्यम से धन की व्यवस्था की गई है। राज्य योजना, आपरेशन फ्लड, सूखा संभावित क्षेत्रीय परियोजना, राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम तथा विश्व बैंक से आर्थिक सहायता प्राप्त की जा रही है।

राज्य योजना के तहत चौथी योजना में 75 लाख तथा पांचवीं योजना काल में 750 लाख रुपये का प्रावधान रखा गया है। 1977-78 के अन्तर्गत 440 लाख रुपये की राशि के उपयोग होने की संभावना है। 1978-79 के दौरान डेयरी विकास कार्यक्रमों पर राज्य योजना के तहत 204.91 लाख की राशि प्रस्तावित है।

आपरेशन फ्लड परियोजना के तहत 382 लाख रुपए की राशि में से बीकानेर डेयरी संयंत्र पर 199 लाख रुपये तथा, जोधपुर व भरतपुर योजनाओं पर आंशिक व्यय किया जाएगा।

सूखा प्रवृत क्षेत्रीय परियोजना के तहत 734 लाख रुपये से जोधपुर डेयरी संयंत्र का अधिकांश व्यय, 12 अवशीतन केन्द्र तथा जोधपुर बीकानेर में पशु आहार कारखानों की स्थापना किया जाना प्रमुख है।

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम परियोजनाओं के अन्तर्गत अजमेर, कोटा, जोधपुर व उदयपुर डेयरी संस्थान तथा भीलवाड़ा अवशीतन केन्द्र के निर्माण हेतु 144.75 लाख रुपये के ऋण की व्यवस्था की गई है।

विश्व बैंक परियोजना के माध्यम से अलवर, जयपुर, अजमेर, सवाई माधोपुर व भीलवाड़ा डेयरी संयंत्रों, 7 अवशीतन केन्द्रों, 5 पशु आहार कारखानों के निर्माण व दुग्ध उत्पादन वर्धन कार्यक्रमों के लिए 414 लाख रुपये के ऋण व अनुदान की व्यवस्था की गई है। जनजाति क्षेत्र उप-योजना के तहत उदयपुर डेयरी संयंत्र व बांसवाड़ा अवशीतन केन्द्र के निर्माण एवं दुग्ध उत्पादन वर्धन कार्यक्रमों के लिए 55 लाख रुपये के अनुदान का प्रावधान है।

विगत तीन वर्षों में उठाये गये कारगर कदमों के फलस्वरूप राजस्थान में जहां पूर्व में मात्र 2200 लीटर दूध प्रतिदिन संकलित होता था वहां अब यह उपलब्धि 2.6 लाख लीटर दूध प्रतिदिन पहुंच गई है तथा इस वित्तीय वर्ष के अन्त तक इसके 3.5 लाख लीटर प्रतिदिन तक पहुंच जाने की संभावना है। प्रदेश में यह समचा कार्य सहकारी तंत्र के सुदृढ़ आधार के माध्यम से हो रहा है। लगभग 1327 दुग्ध उत्पादन सहकारी समितियां जिनके माध्यम से 3500 ग्रामीण युवकों को रोजगार साधन मिलने लगे हैं, इस कार्य में संलग्न हैं। 1978--79 तक ऐसी सहकारी समितियों की संख्या 1845 तक पहुंचने की योजना क्रियान्वित की जा रही है।

बीकानेर में 1 लाख लीटर प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन का एक डेयरी संयंत्र कार्यशील है तथा लूणकरणसर, सरदारशहर में 10-10 हजार के अवशीतन केन्द्र कार्यशील हैं जिनकी क्षमता बढ़ाकर 30-30 हजार की जा रही है। इसी प्रकार राजगढ़ में 2000 लीटर क्षमता का अवशीतन केन्द्र स्थापित किया जा रहा है।

जोधपुर में 1 लाख लीटर प्रतिदिन दुग्ध उत्पादन क्षमता का डेयरी संयंत्र कार्यशील है। इसी प्रकार पोकरण, पाली, बालोतरा, मेड़तासिटी में 10-10 हजार क्षमता के अवशीतन केन्द्र कार्यशील हैं। बढ़ती मांग को ध्यान में रखकर अब इनकी क्षमता दुगुनी की जा रही है। इसके अतिरिक्त, बाड़मेर में 20,000 लीटर, फलौदी व नागौर में 10-10 हजार लीटर प्रतिदिन क्षमता के अवशीतन केन्द्र स्थापित किए जाने की कार्यवाही प्रगति पर है।

भीलवाडा में भी 20,000 लीटर क्षमता का अवशीतन केन्द्र प्रगति पर है। अजमेर में वर्तमान में 30,000 लिटर प्रतिदिन उत्पादन क्षमता का डेयरी संयंत्र स्थापित है। इसे एक लाख लीटर क्षमता में परिवर्तित करने का विस्तार कार्य प्रगति पर है। विजयनगर व ब्यावर में 10-10 हजार लीटर क्षमता के अवशीतन केन्द्र स्थापित करने की कार्यवाही भी प्रगति पर है।

अलवर में 1 लाख लीटर क्षमता का डेयरी संयंत्र लगाया जा रहा है तथा तिजारा में 20,000 लीटर क्षमता का अवशीतन केन्द्र स्थापित किया जा रहा है।

जयपुर में डेढ़ लाख लीटर क्षमता का डेयरी संयंत्र स्थापित किया जा रहा है। पूर्व में यहां 30,000 लीटर दूध ही एकत्रित होता था। मालपुरा जहां अभी 4000 लीटर क्षमता का अवशीतन केन्द्र कार्यशील है उसे बढ़ाकर 20 हजार किया जा रहा है। झुंझुनू में 20,000 तथा गंगापुर सिटी में 20,000 लीटर क्षमता के अवशीतन केन्द्र स्थापित करने का कार्य भी प्रगति पर है।

कोटा व उदयपुर में 25-25000 लीटर प्रतिदिन क्षमता उत्पादन के डेयरी संयंत्र स्थापित किए जा रहे हैं।

सीकर, दौसा, कोटपूतली व राजगढ़ में भी केन्द्र स्थापित किए जाएंगे। इस प्रकार राज्य में कुल 20 अवशीतन केन्द्रों की स्थापना होगी।

इसी प्रकार [illegible] संयंत्रों एवं अवशीतन केन्द्रों का एक विस्तृत जाल सा बिछाया जा रहा है, जिससे पशुपालकों एवं पशुधन की प्रगति का मार्ग प्रशस्त होने लगा है।

सहकारी एवं सरकारी प्रयत्नों के अतिरिक्त सरकार ने जालौर ज़िले के रानीवाड़ा क्षेत्र में 3 करोड़ की प्रस्तावित लागत से निजी क्षेत्र में एक बड़े दुग्ध पदार्थों के उत्पादन हेतु एक कारखाने की स्वीकृति 1969 में प्रदान की थी। इस कारखाने का अधिकांश कार्य पूर्ण हो चुका है तथा जालौर, पाली, बाड़मेर व सिरोही ज़िले के गांव लाभान्वित होने लगे हैं। 150 दूध संग्रह केन्द्रों की स्थापना से कारखाने के लिये 15,000 लीटर दूध प्रति दिन एकत्रित होने लगा है। कारखाने में चिकनाई व बिना चिकनाई वाला दूध, चूर्ण, बच्चों का आहार, मक्खन व घी उत्पादित होने लगा है। पूरी क्षमता से कार्य करने पर 20 करोड़ रुपये के मूल्य का दुग्ध व दुग्ध सामग्री के उत्पादन की संभावना है।

पशु आहार कारखाने

दुग्ध उत्पादकों को उचित मूल्य पर संतुलित पशु आहार उपलब्ध कराने के लिये 1977-78 वर्ष के दौरान 4 पशु आहार कारखानों पर कार्य आरम्भ किया गया था। ये कारखाने नबवई (भरतपुर), अजमेर, जोधपुर व बीकानेर में स्थापित किए जा रहे हैं। प्रत्येक की क्षमता 100 मैट्रिक टन प्रति टन होगी। कालान्तर में अन्य स्थानों पर भी पशु आहार कारखाने स्थापित किये जायेंगे। वर्तमान में पशु आहार की नियमित व्यवस्था सहकारी क्षेत्र में जयपुर स्थित 30 टन प्रतिदिन क्षमता के कारखाने व राज्य के बाहर के कारखानों के माध्यम से की जा रही है। सन्तुलित पशु आहार से दुग्ध उत्पादन बढ़ाने में अनुकूल परिणाम सामने आने लगे हैं। राज्य सरकार ने महासंघ के माध्यम से इस कार्य को तेजी से पूरा करने की कार्यवाही की है। 1978-79 के अन्त तक राज्य में दो पशु आहार कारखानों के उत्पादनों क आरम्भ होने की संभावना है

डेयरी विकास कार्यक्रम के तहत पशु पालकों को नियमित निःशुल्क पशु चिकित्सा सेवा का लाभ दिया जा रहा है। वर्तमान में 24 चल पशु चिकित्सा इकाइयां व 5 आपात सेवा इकाइयां विभिन्न क्षेत्रों में कार्यशील हैं। डेयरी कार्यक्रम के लिए आवश्यकतानुसार अग्रिम रूप से तकनीकी विशिष्टता एवं गैर तकनीकी कार्यकर्त्ताओं को भी तैयार किया जा रहा है। 1976-77 में 200 तकनीकी स्नातकों को रोजगार उपलब्ध कराया है तथा चालू वर्ष में 250 व आगामी वर्ष में 300 ऐसे स्नातकों को इस कार्य में संलग्न किये जाने की योजना है। गैर तकनीकी लोगों को भी डेयरी विकास कार्यक्रम में रोजगार साधन जुटाये जा रहे हैं।

अभी ऐसी श्रेणी के लगभग 1200 व्यक्तियों को रोजगार सुलभ हैं जिसे आगामी वर्ष तक 1600 तक बढ़ाये जाने की योजना क्रियान्वित की जावेगी। पशु चिकित्सा के अन्तर्गत वर्तमान में 1133 सहकारी समितियां कार्यरत हैं।

प्रदेश में डेयरी क्रियान्वित की जा रही परियोजनाओं के तहत दिसम्बर, 77 के अन्त तक 1317 सहकारी समितियां जिनकी सदस्यता 68,482 है, महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। प्रयास इस दिशा में किए जा रहे हैं जिससे कि योजनावधि में ऐसी 1800 सहकारी समितियां समूचे राजस्थान में गठित की जा सकें। इस योजना के पूरा होने पर 3.66 लाख कृषक परिवार की आर्थिक दशा क्रमोन्नत हो सकेगी।

1976-77 के दौरान 70,941 मैट्रिक टन दूध की मात्रा संकलित की गई थी जबकि अब प्रदेश में वर्तमान में 3 लाख लीटर दूध प्रतिदिन संग्रहित होने लगा है। इसमें से लगभग 2½ लाख लीटर दूध दिल्ली को भिजवाया जा रहा है।

प्रदेश में तीन वर्षों में दुग्ध उत्पादन में तीन गुनी वृद्धि हुई है। प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री भेरोसिंह शेखावत ने अभी हाल ही में इस क्षेत्र में किये जा रहे प्रयासों का आकलन किया है तथा निर्देश दिये हैं कि दुग्ध परियोजनाओं के कार्यक्रमों को गतिशीलता दी जाय व उत्पादन निर्धारित 4 लाख लीटर के स्थान पर अब 7 लाख लीटर प्रतिदिन की क्षमता तक ले जाने की कार्यवाही की जाय। अवशीतन केन्द्रों की स्थापना तेजी से की जानी चाहिये। यह उल्लेखनीय है कि विभिन्न योजनाओं के माध्यम से वर्तमान सरकार ने गत वर्ष 735.99 लाख तथा चालू वर्ष 1978-79 के दौरान 1247.02 लाख रुपये का प्रावधान डेयरी कार्यक्रम के लिए उपलब्ध कराया है। वर्तमान सरकार क्षेत्रीय असमानताएं व असन्तुलन की स्थिति को समाप्त कर सभी क्षेत्रों को लाभान्वित करने की योजनाएं लागू कर रही है। डेयरी कार्यक्रम से मुख्य रूप से मरु क्षेत्रीय ज़िलों के निवासियों को अधिक लाभ मिलेगा जहां पशुपालन प्रमुख धन्धा है।

इन योजनाओं के अतिरिक्त राज्य सरकार ने केन्द्रीय सरकार के दुग्ध सकलन केन्द्रों को सड़क सुविधा का लाभ देने के उद्देश्य से सड़क सुधार निर्माण कार्यक्रम सम्बन्धी लगभग 36 लाख रुपये लागत की ग्रामीण सड़क योजना भी 1977-78 के दौरान प्रेषित की थी। इस योजना के तहत जयपुर, टौंक, बीकानेर व जयपुर के ग्रामीण अंचल लाभान्वित होंगे। केन्द्रीय सरकार ने 5 सड़कों के सम्बन्ध में स्वीकृति प्रदान कर दी है जिसे निर्माण विभाग डेयरी विकास विभाग के समन्वय से क्रियान्वित कर रहा है।

इस प्रकार राजस्थान हरित क्रांति के बाद श्वेत क्रांति की ओर अग्रसर है। श्वेत क्रांति के व्यापक प्रयासों और इसकी अब तक मिली सफलताओं से आशा बंधती है कि शीघ्र ही राजस्थान देश के अग्रणी दुग्ध उत्पादन राज्यों की श्रेणी में आ जाएगा तथा यहां से पशु पालकों की आर्थिक दशा पर्याप्त रूप से उन्नत हो जाएगी। ●

अस्पृश्यता: समस्या और समाधान

एस० एस० मेनारिया

अस्पृश्यता समकालीन भारत की एक प्रबल मानवीय समस्या है । 1971 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जातियों की संख्या 7,99,95,896 है जिनको बहुत अछूत माना जा रहा है, यानी कि ये जातियां कुल जनसंख्या का 14.61 प्रतिशत है । अनुसूचित जातियों की आधी से ज्यादा जनसंख्या इन चार राज्यों में है—उत्तर प्रदेश (एक करोड़ 85 लाख), पश्चिम बंगाल (85 लाख), बिहार (79 लाख), तथा तमिल नाडु (73 लाख) । इस तरह हिन्दु समाज का एक महत्वपूर्ण भाग इसी अस्पृश्यता की धारणा के कारण अनेक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अनर्हताओं से ग्रस्त है । यह पवित्रता और अपवित्रता के आधार पर बनी ऐसी भावना है जिसके अनुसार एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के छूने, देखने या छाया पड़ने से अपवित्र हो जाता है । सवर्ण हिन्दुओं को अपवित्रता की भावना से बचाने के लिए उन पर अनेक अनर्हतायें लाद दी गई हैं और उनके सम्पर्क से बचने के कई उपाय किए गए हैं । वैसे यह समस्या कोई नयी नहीं है, किन्तु इसकी प्रकृति एवं स्वरूप में समय, स्थान एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होता रहा है । अतीत में अस्पृश्य जातियों से सम्बन्धित सम्बोधन चाण्डाल, डोन, शूद्र आदि के नाम से किया जाता था और उसके बाद उनका नामकरण दलित वर्ग, बाहरी वर्ग, अनुसूचित जाति एवं हरिजन के रूप में होता रहा है ।

प्रारम्भ से ही यह विषय विवादास्पद रहा है कि कौन-कौन सी जातियां अस्पृश्य हैं और उनका आधार क्या है ? अस्पृश्यता की प्रकृति और स्वरूप भिन्न भिन्न भागों में भिन्न-भिन्न हैं । साधारणतया, यह कहा जाता है कि वे सभी जातियां अस्पृश्य हैं जो घृणित पेशों के द्वारा अपना जिविकोपार्जन करती हैं । किन्तु यह आधार, आंशिक रूप से सही है क्योंकि ऐसी अनेक जातियां हैं जो घृणित व्यवसाय नहीं करतीं तथापि परम्परागत रूप से उनको घृणित जातियों की शृंखला में रखा जाता है । वास्तव में देखा जाए तो अस्पृश्यता जाति व्यवस्था की ही उपज है, जिसका आचार जन्म है । अस्पृश्यता बहुआयामी समस्या है । हिन्दू जाति व्यवस्था से घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण अपने मूल में सामाजिक है तथापि इसका आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक आयामों से भी घनिष्ठ सह सम्बन्ध है । इसलिए अस्पृश्यता निवारण के लिए किए जाने वाले प्रयासों के लिए अन्य सन्दर्भों का भी ध्यान रखना आवश्यक है ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद शिक्षा के आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण आदि कारणों द्वारा सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों, सोचने के तरीकों तथा लोगों के विचारों और चेतना में द्रुतगति से परिवर्तन आया है । परम्परागत विचारधाराओं पर आधारित सामाजिक भेद भाव कम हुए हैं तथापि दूसरी तरफ देश के कुछ भागों में सामाजिक भेदभावों को बढ़ावा भी मिला है, चाहे उनके कारण कुछ भी रहे हों । आये दिन होने वाले वर्ण हिन्दुओं द्वारा अछूत वर्ग पर अत्याचार, हिंसात्मक घटनाएं, ईर्ष्या, घृणा राष्ट्रीय स्तर का एक विचाराधीन प्रश्न बन गया है ।

अस्पृश्यता की समस्या का कोई हल निकाला जाए, उससे पहले यह भी ध्यान रखना आवश्यक होगा कि यह अछूत या अस्पृश्य जैसी समस्या केवल मात्र सवर्ण हिन्दुओं एवं अनुसूचित जातियों के मध्य में ही व्याप्त नहीं है अपितु अनुसूचित जातियों के अन्दर भी इस प्रकार का छूआछूत पाया जाता है । अनुसूचित जाति तो अनेक जातियों का एक बहुत बड़ा समूह है जिसमें उच्च एवं निम्न भावना के आधार पर स्तरीकरण व्याप्त है । ये जातियां भी आपस में पवित्रता, अपवित्रता, निम्न, उच्च आदि भावनाओं को लेकर एक दूसरे में भिन्न प्रकार का व्यवहार करती हैं। यह ही नहीं इनके अन्तर्गत भी अनेक सामाजिक तथा सांस्कृतिक अनर्हताएं एवं प्रतिबन्ध प्रचलित हैं जो एक दूसरे के प्रति वैमनस्यता ईर्ष्या एवं घृणा को जन्म देने के साथ ही सभी को आपस में संगठित होने में एक बाधा का काम करते हैं । देश के विभिन्न भागों में भिन्न जातियों में पाया जाने वाला स्तरण एवं अस्पृश्यता का स्वरूप स्थान तथा वहां की सामाजिक व्यवस्था के अनुसार भिन्न-भिन्न है ।

पिछले कुछ दशकों से अनेक जातियां के लोग परम्परागत व्यवसाय छोड़कर परम्परावादी व्यवसायों में लगे हुए हैं । परिणाम स्वरूप उनकी आर्थिक स्थिति पहले की अपेक्षा अधिक सुदृढ़ हुई है । इससे यह भी स्पष्ट हुआ है कि इनके साथ जो अस्पृश्यता है उसकी मात्रा में कमी आयी । लेकिन अस्पृश्यता का जितना सम्बन्ध आर्थिक है उससे भी ज्यादा मनोवैज्ञानिक है । सरकारी तौर पर अस्पृश्यता को अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम, 1955 के अनुसार समाप्त कर अस्पृश्य जातियों से सम्बन्धित सभी सामाजिक तथा सांस्कृतिक अनर्हताएं समाप्त कर दी गई तथा सवर्ण हिन्दुओं के भेदभाव पूर्ण व्यवहार करने पर दण्ड का भी प्रावधान रख दिया गया लेकिन समस्या के स्वरूप में कोई भौतिक अन्तर नहीं आया । कारण स्पष्ट है कि जब तक लोगों की मनोवृत्तियों में परिवर्तन नहीं किया जाता तब तक समस्या का सही और स्थायी निराकरण करना कठिन है । यह महसूस किया गया है कि संपूर्ण हिन्दू जातियां अस्पृश्य जातियों को इसलिए नहीं छूती हैं कि वे अपवित्र धंधों में लगी हुई हैं और स्वयं सवर्ण जातियां पवित्र व्यवसायों में । यही पवित्र एवं अपवित्र भावनाएं समाज में उच्च एवं निम्न जैसे स्तरणों को जन्म देती हैं । सवर्ण हिन्दुओं के मस्तिष्क में प्रारम्भ से ही अस्पृश्य जातियों के सम्बन्ध में कुछ इस प्रकार की इमेज और जातीय पूर्वाग्रह बन गए हैं जिनके कारण इनको निम्न और

हीन समझा जाता है । [illegible] अस्पृश्य जातियों की जीवन शैली, मनोवृत्ति, संस्कार, प्रथाएं इस प्रकार प्रारम्भ से ही भिन्नता लिए हुए हैं जो सम्पूर्ण संस्कृति से अलग-थलग, प्रदर्शित होती हैं, तथा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित होती रहती हैं । इस तरह अस्पृश्य जातियां संवर्ण हिन्दुओं से स्पष्ट अलग दिखती हैं । जिन अस्पृश्य परिवारों के स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद जो उन्हे सरकारी सुविधायें और रियायतें प्राप्त हुई हैं उन के आधार पर उन्होंने आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति प्राप्त कर ली है । अतः उनके साथ अस्पृश्यता जैसी कोई विशेष समस्या नहीं है । किन्तु यह सभी व्यक्तिगत मामले हैं जो समस्या का निराकरण नहीं कर सकते ।

यह भी अवलोकन किया गया है कि शिक्षा, आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण आदि अनेक कारणों से अस्पृश्य मात्र के प्रति जो अपवित्रता की भावना व्याप्त थीं, वह तो अब लगभग समाप्त हो गई है, लेकिन अस्पृश्यता की जो समस्या विद्यमान है, वह इससे कुछ और अधिक है । यह एक सोचने का तरीका या दृष्टिकोण है । छूने से अपवित्रता की बात मनुष्यों के मस्तिष्क में जमी हुई है । अतः समस्या का स्वरूप जितना बाह्य् है उतना ही आन्तरिक भी । इसके साथ ही यह भी देखा गया है कि अस्पृश्य जातियों के अन्तर्गत जो वृद्ध व्यक्ति हैं वे अपने को उसी स्थिति में रखने को अधिक हितकर समझते हैं जिसमें वे रह रहे हैं । उनमें हीनता की भावना विद्यमान है । दूसरे अस्पृश्य जातियों में जन्म लेने के कारण ये लोग कर्म-काण्ड, पाप-पुण्य, भाग्यवादिता के दृष्टिकोण से सोचते हैं । वृद्ध लोग परम्परागत रूप से चली आ रही सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्थाओं में सुधार, संशोधन के पूर्ण पक्ष में भी नहीं होते । परम्पराओं से प्रभावित जीवन शैली विरासत में नयी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है । परिणाम यह होता है कि इन लोगों के आचार-विचार, तौर-तरीके, जीवन शैली, जो संस्कृति के ही मुख्य अंग, है, आमव्यक्तियों से भिन्न हो जाते हैं । इस तरह से ये लोग राष्ट्रीय जीवन की मुख्य धारा से अलग होकर एक "उपसंस्कृति" का निर्माण करते हैं ।

अस्पृश्यता निवारण हेतु किए गए प्रयत्नों की यदि समीक्षा की जाय तो स्पष्ट होगा कि इस दिशा में तीन तरह के प्रयत्न किए जाते रहे हैं । (1) स्वयं अस्पृश्य जातियों द्वारा (2) सवर्ण हिन्दुओं द्वारा तथा (3) सरकार द्वारा उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में सर्वप्रथम ज्योतिराव फूले के द्वारा संगठित प्रयत्न किया गया । इन्हीं के प्रयत्नों से पूना में "सत्यशोधक समाज" की स्थापना हुई जिसने अस्पृश्यों के लिये अनेक अधिकारों की मांग की । बाद में इस बात को डा० अम्बेडकर ने आगे बढ़ाया और 1920 में अखिल भारतीय दलित संघ और अखिल भारतीय दलित वर्ग फैडरेशन की स्थापना की । सवर्ण हिन्दुओं द्वारा किये जाने वाले प्रयत्नों में वे सभी प्रयास सम्मिलित किये जा सकते हैं जिन्होंने गैरसरकारी संगठनों के माध्यम से अस्पृश्यों की सामाजिक एवं आर्थिक अनर्हताओं को समाप्त करने के लिए प्रयास किये । ब्रह्म समाज, आर्य समाज, राम कृष्ण मिशन, भारतीय रेडक्रास सोसायटी आदि के द्वारा किये गये प्रयत्न मुख्य हैं जिन्होंने इस समस्या के निवारण में सराहनीय भूमिका अदा की । महात्मा गांधी द्वारा किया गया कार्य भी इस श्रेणी में सम्मलित किया जायेगा । गांधी जी ने अस्पृश्य जातियों का नामकरण "हरिजन" किया तथा इनके उद्धार की दृष्टि से "हरिजन" नामक पत्रिका का प्रकाशन भी किया । तीसरी श्रेणी के अन्तर्गत वे सभी प्रयत्न आते हैं जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद सरकारी तौर पर किए गए हैं । अस्पृश्यों के सामाजिक व आर्थिक सुधार हेतु अनेक संवैधानिक उपाय किये तथा इसके साथ ही अस्पृश्यता को समाप्त करने, भेदभाव को रोकने के उद्देश्य से जून, 1955 से अस्पृश्यता अपराध अधिनियम, 1955 सम्पूर्ण देश में लागू किया गया ।

अब यह भी स्पष्ट है कि सभी प्रयासों के उपरान्त भी परिणाम नगण्य रहे हैं । समस्या आज भी ज्यों की त्यों विद्यमान है और राष्ट्रीय-स्तर का चर्चित प्रसंग बना हुआ है । इसके निराकरण की दिशा में कुछ सुझाव विचारणीय है :—

(1) परम्परागत पेशों के नवीनीकरण का प्रयत्न तथा श्रम के महत्व को प्रति स्थापित किया जाना चाहिए । इनके पेशों को संरक्षण दिया जाना चाहिए तथा परम्परागत देशों में निपुणता हेतु इन लोगों के लिए प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना करनी चाहिए ।

(2) अस्पृश्यों के सम्बोधन का नाम ही परम्परागत धारणा को प्रदर्शित करता है । अतः इनका नामकरण सांस्कृतिक नामों के आधार पर ही करना चाहिए । जैसे "अनुसूचित जाति" सम्पूर्ण समुदाय के प्रति हीन धारणा प्रदर्शित करती है ।

(3) सरकारी आरक्षण, सुविधाओं और रियायतों का आधार जाति नहीं होना चाहिए क्योंकि यह जातिवाद की भावना को प्रोत्साहन देकर ईर्ष्या एवं घृणा को जन्म देता है ।

(4) इनके बच्चों की शिक्षा निःशुल्क और अनिवार्य होनी चाहिए । योग्य विद्यार्थियों के लिए उच्च एवं विदेशी शिक्षा के ग्रहण हेतु सरकारी सुविधायें उपलब्ध करानी चाहिए ।

(5) जो माता-पिता अभी तक अपवित्र व्यवसायों में संलग्न हैं उनके बच्चों को निश्चित आयु तक उनसे अलग कर देना चाहिए ।

(6) जब कभी इस समस्या के निराकरण हेतु योजना बनाई जाये उसका पूर्ण परीक्षण कर लेना चाहिए । उदाहरण के लिए जो सफाई एवं मेहतर का काम करने वाले लोग हैं उन्हें कुछ निश्चित समय के लिए राजपत्रित अधिकारी के समान वेतन दे देना चाहिए तथा इस प्रकार के पदों के रिक्त स्थान की पूर्ति के लिए विस्तृत तौर पर विज्ञापन करवा कर आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाने चाहिए । इसमें जो रुचिकर बात देखने की है कि कितने संवर्ण हिन्दू इसके लिए आवेदन करते है, कितने स्वीकार करते हैं तथा आगे जाकर वे किस तरह सामाजिक स्थिति में सामंजस्य स्थापित करते हैं और समाज उनको किस तरह स्वीकृति प्रदान करता है ? इस प्रकार के परीक्षण के द्वारा आधुनिक समय में अस्पृश्यता को आर्थिक सन्दर्भ में समझने का अवसर प्राप्त होगा । इसके साथ ही योजना का प्रारूप इस समस्या से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं को मद्दे नजर रखते हुए बनाना चाहिए ।

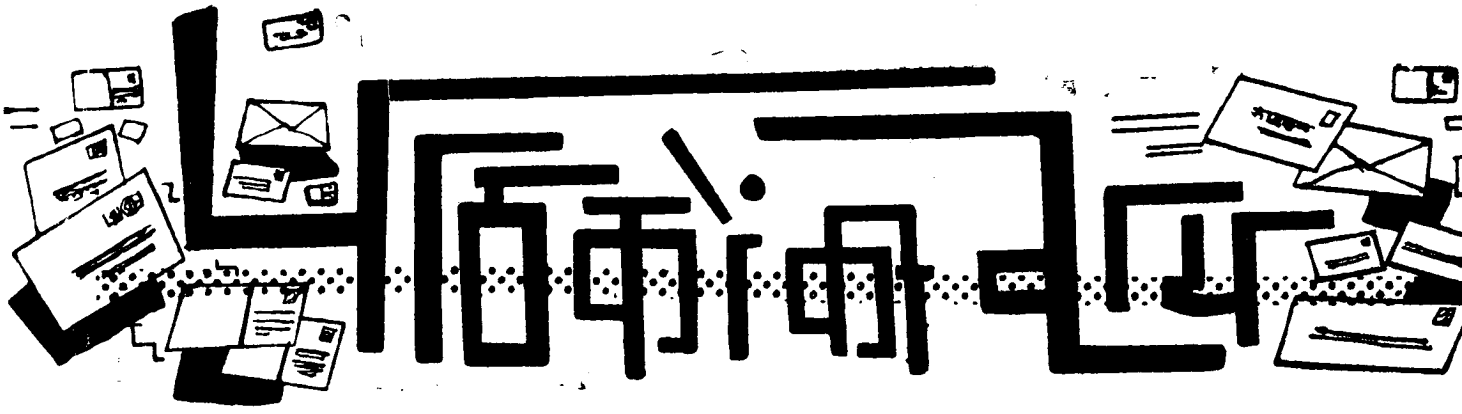

ग्राम विकास : एक कठिन परीक्षा

चन्द्र पाल सिंह

प्रायः कहा जाता है कि यदि वास्तविक भारत के दर्शन करने हों तो उसके गांवों को देखा जाए जहां देश की 80 प्रतिशत जनता रहती है और जो मुख्यतः कृषि व्यवसाय से सम्बद्ध है। प्राचीन एवं मध्य काल में हमारे गांव अधिक सामाजिक एवं प्रशासनिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण इकाई रहे हैं जहां ग्राम पंचायतें, कार्य पालिका एवं न्यायपालिका के रूप में आपस में उठे विवादों और छोटे अभियोगों का अपने स्तर पर निवारण करके अपनी कार्यकुशलता तथा न्यायप्रियता का सराहनीय परिचय देती थीं। समय-समय पर संगठन, धर्म और मर्यादा की शिक्षा देकर समाज को सशक्त भी बनाती थीं। विदेशी शासन काल में इन संस्थाओं का अन्त हो गया और केवल पटवारी मुखिया और चौकीदार ही गांवों में सरकार के कारकुन रह गए। विदेशी शोषण की नीति के कारण गांवों और किसानों की दशा अविद्या और गरीबी के आवरण में एक दयनीय स्थिति पर पहुंच गई जिसे देख कर सन् 1925 में पूज्य महात्मा गांधी ने अपनी कल्पना के स्वराज्य को गांवों में पहुंचाने और वहां राम-राज्य स्थापित करने की बात कही। सन् 1938 में, गवर्नमैंट आफ इंडिया एक्ट 1935 के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश में बनी सरकार के गृहमंत्री पंडित गोबिन्द बल्लभ पंत ने कानपुर में पुलिस के वेतन बढ़ाने की मांग के संबंध में दिए गए अपने भाषण में किसानों के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त की और कहा कि पहले उन्हें किसानों के लिए कुछ करना है, जिनकी पीठ गरीबी के बोझ से झुक गई है। उल्लेखनीय है कि सन् 1930 के नमक कानून आन्दोलन से लेकर सन् 1942 के मुक्ति आन्दोलन तक के सभी संम्बंधों में उत्साही और निष्ठावान कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ी तो उसकी पूर्ति गांवों के किसानों में से हुई।

इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में गांवों के महत्व को समझते हुए सन 1947 के बाद अपनी सरकार ने जमींदारी प्रथा का उन्मूलन करके किसानों को उनकी जोती हुई भूमि पर उन्हें भूमिधर बनाया और किसानों की उन्नति की दिशा में बहुत सी योजनाएं चलाईं किन्तु उन पर लगाए गए समय और किए गए वित्त व्यय के अनुपात में परिणाम अत्यन्त असन्तोषजनक रहे और ग्रामीण क्षेत्र आज भी दीन हीन और दयनीय दशा में है।

अतः गांवों का विकास आज सरकार के सामने एक जटिल एवं महत्वपूर्ण संकल्प है जिसे पूरा करने के लिए उसे पूर्णतः कटिबद्ध होना है। प्रधान मंत्री श्री मोरारजी देसाई ने कहा है कि देश की समृद्धि गांवों की समृद्धि के बिना सम्भव नहीं हो सकती और ग्राम विकास योजना की सफलता सरकार को अगले दस वर्षों में देश से बेरोजगारी दूर करने के अपने वायदे को पूरा करने में सहायक होगी। उन्होंने यह भी कामना की है कि गांव स्वच्छ होंगे और उनमें सड़कें बनेगीं। कोई व्यक्ति बिना रोजगार के न रहेगा और न ही बिना घर के। पिछली सरकार की विकास योजनाओं की असफलताओं के मूल कारणों को भी वह बहुत हद तक समझते हैं और इसीलिए उन्होंने अधिकारी वर्ग को ग्रामीणों के प्रति अपनाये हुए अपने रवैये को छोड़कर ग्राम विकास कार्यक्रम में गांव वालों का सहयोग लेने की सलाह दी है।

जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के पश्चात् किसान में अपनी भूमि के प्रति स्वामित्व की भावना जागी और फलस्वरूप उसने उत्साह और परिश्रम से काम कर निसन्देह उत्पादन को बढ़ाया। कृषि उत्पादन की वस्तुओं के भाव चढ़ने से उसकी आर्थिक दशा में कुछ सुधार हुआ और गांवों के बच्चों के लिए स्कूल तथा शहरों में कालेजों की सुविधा हो जाने के कारण शिक्षा का प्रसार हुआ। बच्चों के खाने पहिनने और रहन-सहन का स्तर बढ़ा और धीरे-धीरे वह शहरी जीवन से स्पर्धा लेने लगा। वह केवल उसकी मेहनत का ही फल था। भूमि सुधार की दिशा में दूसरा कदम चकबन्दी का कार्यक्रम था जो बहुत से स्थानों पर अभी तक चल रही है। चकबन्दी हो जाने से अधिकतर किसानों को कृषि कार्य में सुविधा हुई किन्तु इसकी प्रक्रिया में चकबन्दी विभाग के सी० ओ०, ए० सी० ओ० तथा अन्य कर्मचारियों और उनके सहायक मालविभाग के लेखापाल आदि के द्वारा अपनाए गए पक्षपात, अनियमितता और भ्रष्टाचार के कारण किसान का और भी शोषण हुआ और गांवों में दलालों की भी खूब बनी जबकि कुछ 'सुविधा शुल्क' न दे सकने वाले किसानों के चक दो या तीन जगह कट गए जिसके कारण वे आज भी परेशान हैं। फिर इस योजना के अन्तर्गत उठे विवादों और अभियोगों को निपटाने के लिए चकबन्दी अधिकारियों की विशेष अदालतें गठित हुई जिनके परिणाम स्वरूप किसान की छोटी पूंजी वकीलों और अदालतों पर व्यय हुई। हद बन्दी, मेड़बन्दी आदि के

[illegible] पैदा हुए जिनके कारण किसानों को मुकदमेबाजी में अपने रुपए की बरबादी करनी पड़ी। नतीजा यह हुआ कि किसान दिवालिया बन कर उसी स्थिति पर पहुंच गया जहां से आज़ादी पाने के पश्चात् वह उठा था।

सन 1952 के बाद देश में सामुदायिक कार्यक्रम का श्री गणेश हुआ। कृषि विकास के लिए सिंचाई, विद्युत आदि पर जोर दिया गया जबकि गांवों में सफाई स्वच्छता, पेयजल, महिला कल्याण आदि के कार्यक्रम चलाए गए! किन्तु यह एक दुर्भाग्य पूर्ण बात रही कि इन सब के बावजूद न तो ग्राम विकास कार्य में कोई खास प्रगति हुई और न ही कृषि में अपेक्षित उन्नति। इसका मुख्य कारण था इन अधिकारियों एवं कर्मचारियों में से अधिकांश में अपेक्षित समाज सेवा तथा कर्तव्य निष्ठा की कमी। धीरे-धीरे गांव वालों में इन संस्थाओं के प्रति अरुचि और अविश्वास पैदा होने लगा। ग्राम विकास के क्षेत्र में इस असंतोष-जनक स्थिति को देखकर लोगों में विकास कार्यक्रमों के निमित्त अधिक उत्साह और उत्तरदायित्व जागृत करने के उद्देश्य से सन 1957 में श्री बलवंतराय मेहता समिति का गठन हुआ और इस कमेटी की सिफारिशों के आधार पर देश में एक त्रिस्तरीय पंचायती राज प्रणाली की स्थापना हुई। परन्तु ग्राम पंचायतें शिक्षण और अनुदान की कमी और आपसी पार्टीबन्दी के कारण अधिक सक्रिय न बन सकीं।

सरकारी तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण देने के लिए एक मात्र अधिकृत एजेन्सी सहकारी बैंक और उससे संबंधित सहकारी समितियों ने लाखों रुपए के घोटाले करके ग्रामीणों का बुरी तरह शोषण किया है जिनके मामलों की छानबीन अभी तक चल रही हैं। कृषि विभाग के बीज गोदाम के खाद की अधिकतर स्थानीय खाद विक्रेताओं द्वारा तस्करी हुई और वहां से किसानों को केवल ऊंचे दामों पर ब्लैक से ही खाद उपलब्ध हुआ। ग्रामीण क्षेत्र में बहुत से शिक्षक विभिन्न प्रकार की अनियमितताओं और भ्रष्ट तरीकों से ही चलने के आदी हो गए हैं और इसके फलस्वरूप गांवों में जो साक्षरता बढ़ी है उसे शिक्षा नहीं कहा जा सकता। प्रौढ़ संस्थाएं केवल नाम के लिए चलती रहीं और इस योजना पर किया हुआ व्यय विधायकों और निरीक्षकों की आमदनी का जरिया बना रहा।

अतः आज गांवों में एक ओर तो है गरीबी और भुखमरी और दूसरी ओर है लोगों में शहरी जीवन से स्पर्धा करने की प्रवृत्ति जिसकी वजह से लोगों में अपराध-जनक भावना पनप रही है। कानून व्यवस्था का ह्रास होने से गांवों का जन जीवन प्रति दिन असुरक्षित होता जा रहा है। ग्राम प्रधान अधिकतर वे ही चुने गए जो 'जिसकी लाठी उसकी भैंस के' सिद्धान्त का अनुकरण करते हैं। तीन चौथाई ग्रामीण गरीबी की रेखा पर हैं और ऋण आदि से भी दबे पड़े हैं। आपसी छोटे-मोटे झगड़ों के कारण अपनी खेती-बाड़ी का काम छोड़ कर पुलिस थानों तथा न्यायालयों के चक्कर काट रहे हैं। समाज से मेल-जोल तथा मनोविनोद आदि समाप्त हो चुके हैं। सड़कों तथा यातायात के उपयुक्त साधनों के अभाव के कारण लघु उद्योग जैसे कुक्कुट पालन, डेयरी, तेल निकालना, ऊंचे पैमाने पर सब्जी आदि उगाना असंभव है। मकानों की कमी के कारण गल्ले आदि का कोई छोटा व्यापार भी नहीं किया जा सकता जिस पर शहर वालों का ही एकाधिकार हो गया है। अधिकतर लोग इन मजबूरियों के कारण शहर की ओर भाग रहे हैं। सरकार के कार्यों पर भरोसा नहीं रहा—'मसीहा छोड़ दो हम को, हमारे हाल पर—'

सुझाव

तुम अच्छा कर नहीं सकते, हम अच्छे हो नहीं सकते। इस तरह की निराशाजनक स्थिति है। ग्राम विकास योजना को सफल बनाने के लिए सरकार के कर्तव्य है:

(1) शिक्षा प्रणाली में सुधार लाकर स्वस्थ परम्परा और नैतिक मूल्यों की स्थापना,

(2) पंचायत एवं सहकारी व्यवस्था को आवश्यक शिक्षण देकर स्वच्छ रूप देना,

(3) पंचायतों की समुचित व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया जाए और शिक्षा को ग्रामोन्मुखी बनाया जाए ताकि लोग पंचायती राज और उसकी कार्यप्रणाली को समझें,

(4) जन सामान्य में अधिकारों के [illegible] तथा दायित्वों के प्रति निष्ठा [illegible] उचित शिक्षा की अनिवार्यता का बोध कराना। तब ही वे पंचायतों में सक्रिय भाग लेकर सरकार के परिवार नियोजन, कृषि और छोटे-मोटे विवादों और अभियोगों को निपटाने का काम कर सकेंगे।

(5) अदालती पंचों को कानून तथा प्रक्रिया का शिक्षण देना, (6) अपराध की रोकथाम के लिए विशेष कदम उठाए जाएं जैसे ग्राम सुरक्षा समितियां बनाकर उनमें केवल सेवा भावना से प्रेरित तथा निष्ठावान नवयुवक ही शामिल किए जाएं। इसका दायित्व ग्राम पंचायतों पर ही डाला जाए।

(7) गांवों में सड़कों का जाल बिछाया जाए और उन्हें बाहरी सड़कों से जोड़ा जाए

(8) गांवों के अन्दर मकानों का निर्माण किया जाए जहां नाली तथा खरंजों का प्रावधान भी हो।

(9) ग्रामीणों को पुलिस, लेखापाल तथा अदालतों के शोषण से बचाकर सुरक्षा और सामयिक न्याय प्रदान किया जाए।

इसके साथ ही जनता के भी कर्त्तव्य हैं। विकास के लिए जन सहयोग परम आवश्यक है, सरकारी तंत्र अकेला कुछ नहीं कर सकता और सरकार की योजनाओं की सफलता के लिए जनता को रचनात्मक कार्य करने वाले सत्यनिष्ठ एवं कर्म निष्ठ व्यक्ति देने पड़ेंगे। केवल तब ही ग्राम समृद्धि हो सकेगी जब कृषि और किसान समृद्ध होगा। ●

एडवोकेट,
6सी/13, आजाद नगर,
कंधारी,
आगरा-2 (उ० प्र०)

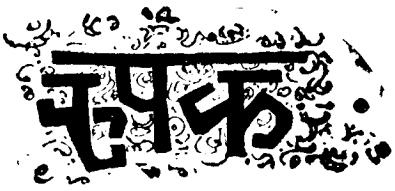

रूपक

सरस्वती का पूजन

※ सुलेमान टाक

इंजीनियरिंग की शिक्षा प्राप्त कर धनीराम के पुत्र उत्तम अपनी जन्म-भूमि आदमपुर लौट कर सरपंच अहमद चाचा की ग्रामोत्थान की कल्पनाओं को साकार करने के प्रयत्नों में जुट गया। देखते ही देखते गांव में स्कूल, पंचायत, अस्पताल आदि की नई-नई इमारतें खड़ी होने लगीं तो जनचर्चा चल पड़ी कि आदमपुर का नव निर्माण हो रहा है। सरपंच अहमद गांव की इस भौतिक प्रगति को देख फूले नहीं समाता था। किन्तु उसकी बूढ़ी आंखें वर्षों से गांव में खड़े कुरीतियों के खण्डहरों को ढहा कर एक और नव निर्माण की प्यास लिए थी, रह-रह कर उसकी आंखें इसके लिए भी उत्तम पर ही टिक जाती, तो अनायास ही उसके हृदय से एक आवाज-सी आती--'अहमद! एक और नव निर्माण उत्तम के हाथों ही होगा।

इन दिनों आदमपुर के कई परिवारों की नजर उत्तम पर टिकी थी। कई मां-बाप उत्तम को अपनी-अपनी पुत्रियों के लिए योग्यतम वर के रूप में देखने लगे थे। इन्हीं में से एक बाबू राम चरण भी थे जो अपनी इकलौती पुत्री लक्ष्मी के लिए पिछले पांच वर्षों से चिन्तित थे। उनके पास धन दौलत का अभाव था किन्तु शहर के डाकघरों में नौकरी करते हुए अपनी पुत्री लक्ष्मी को बी० ए० तक पढ़ा पाए थे। लक्ष्मी रूप-सौन्दर्य की साक्षात प्रतिमा थी किन्तु बाबू रामचरण की दहेज न दे पाने की अयोग्यता उन्हें कई घरों से निराश लौटा चुकी थी। गरीब घरों के लिए लक्ष्मी का बी० ए० पास होना अयोग्यता थी तो अमीर घरों की नजर में धनहीन लक्ष्मी की कोई कीमत नहीं थी।

लक्ष्मी की बढ़ती उम्र राम चरण के लिए बोझ बढ़ाए जा रही है। अहमद से यह बात छिपी हुई नहीं थी। उत्तम को देख-देख वह भी सोचा करता कि शायद रामचरण की चिन्ताओं का अन्त निकट है। एक दिन उत्तम को साथ लिए वह रामचरण के घर पहुंचा। गांव के दो कर्णधारों को अपने द्वार पर देख कर वह चकित हो गया। अतिथि सत्कार के लिए लक्ष्मी ने बैठक में प्रवेश किया, उसे अभिवादन के उत्तर में अहमद ने आशीर्वाद दिया—'सौभाग्यवती हो बेटी।' और उत्तम! उत्तम तो उस सौम्य और सुन्दर मूर्ति के समक्ष अपने आपको खो चुका था। वह मन ही मन बोल उठा--'मैं गांवों-नगरों का शिल्पकार हूं, अगर लक्ष्मी मेरे घर-आंगन की शिल्पकार बन जाए तो--? इस विचार ने उसके हृदय में एक हिलोर पैदा कर दी थी।

अहमद, उत्तम के दिल की बात को ताड़ चुका था। घर लौटते हुए वह उत्तम से बोला--'बेटा उत्तम! तुमने हमारे गांव को सवारा है, तो अब मैं तेरे घर को संवार देना चाहता हूं।'

'मेरा घर चाचा।' उत्तम ने प्रश्न सा किया।

--'हां बेटा! मेरी इच्छा है कि लक्ष्मी मेरे उत्तम की अर्धांगिनी बनकर---।'

अहमद के इन आत्मीय शब्दों को सुनकर उत्तम स्वाभाविक लज्जाभाव से बोला--'चाचा! यह तो आप और पिताजी जानें।'

'बेटा उत्तम! गांव का उत्थान तेरे युवक हाथों की देन है। मेरा तो समर्थन मात्र ही रहा है। मेरा दिल चाहता है कि लोगों के दिमाग में खड़ी कुरीतियों की दीवारों को ढहा कर नव-निर्माण किया जाए। इसमें तुम्हारी ओर से ही एक और मौका आ गया है, उत्तम!' इन शब्दों के साथ ही अहमद ने एक आशा भरी नजर उत्तम पर डाली तो उत्तम ने फिर एक प्रश्न सा रख दिया--'वह कैसे चाचा?

'उत्तम! मैं देख रहा हूं, रामचरण की मनोदशा। लक्ष्मी की बढ़ती उम्र उसे बेचैन करती जा रही है। उसने लम्बे समय तक अभावों का जीवन बिताकर लक्ष्मी को बी० ए० तक पढ़ाया। लक्ष्मी के स्कूल कालेज जाना दकियानूसी समाज की नजरों में खटकता था। किन्तु, रामचरण ने नव निर्माण का विचार नहीं त्यागा था बेटे। परिणाम देखा, तुमने अब भले घरों की कितनी ही कन्याएं विद्यालयों में जाने लगी हैं।'

'हां चाचा!' अब तो शहरों के कालजों में लड़कियों की भीड़ लगी रहती है। उत्तम ने समर्थन-सा दिया।

'पर बेटा! हमारे गांव में तो इस दिशा में पहल करने वाला रामचरण ही था। पहले उसने पढ़ाई का बोझ उठाया, बिरादरी के ताने सहे कि बेटी को आजाद कर रखा है और अब बेटी के लिए घर-घर भटकने पर भी उसके पीले हाथ नहीं हो पा रहे हैं। अहमद की बात सुनकर उत्तम ने पूछा--

'क्यों चाचा! योग्य कन्या की उपेक्षा समाज किस आधार पर करता है?'

'चाचा! तुम्हारे मुंह से निकली बात सारे गांव की इच्छा होती है, भला मुझे कैसे स्वीकार नहीं होगी?' पर यह तो बताओ क्या वरदान देने जा रहे हो?' राम चरण ने पूछा।

'राम चरण अब देर न करो। धनीराम का द्वार खटखटाओ। तुम्हारे लिए खुशियों के

[illegible] । [illegible] की आंखें खुशी से चमक उठीं थीं।

'चाचा! मेरी मजाक न बनाओ। भला मैं बौना चांद को कैसे छू सकता हूं।' रामचरण के शब्दों में निराशा प्रकट हो रही थी।

'रामचरण! तुम बौने नहीं हो। कन्या की शिक्षा की राह में पहला कदम रखने वाले तुम्हीं गांव के पहले नागरिक हो। तुम्हारा रुतबा हमारी नजरों में बहुत ऊंचा है। रामचरण! कुछ रुक कर, अहमद फिर बोला—'धन ही सारी चीजों का माप नहीं है मेरे दोस्त!'

रामचरण को अहमद के इन शब्दों ने बल दिया, वह बोला—'चाचा! मेरा साथ देना पड़ेगा।' धनीराम की कोठी तक मेरे साथ चलना पड़ेगा।

'चिन्ता न करो रामचरण। लक्ष्मी मेरे लिए भी पुत्री के समान है। अहमद ने विश्वास दिलाया।

'नेक काम में देरी क्यों?' अगले ही दिन अहमद चाचा को लिए राम चरण बड़े अरमानों के साथ धनीराम की कोठी पर जा पहुंचा। धनीराम के उनकी कुशल क्षेम और प्रयोजन पूछने पर अहमद चाचा ने कहा—'धनीराम! राम-चरण अपने परिवार का नाता आपके परिवार के साथ जोड़ लेने के अरमान लेकर आया है।'

सेठ धनीराम को अहमद चाचा के ये वचन अटपटे लगे। वह बोला—'मेरे परिवार से कैसा नाता? अहमद के संकेत पर रामचरण बोला 'मैं अपनी पुत्री लक्ष्मी का विवाह आपके पुत्र उत्तम से करने का प्रस्ताव लेकर हाजिर हुआ हूं। धनीराम जी! यदि आप कृपा करें तो मेरे दिल का बोझ उतर सकता है।'

रामचरण की बात सुनकर धनीराम के चेहरे पर घृणा के भाव उभर आए, और वह सोचने लगा—'रामचरण को छोटे मुंह बड़ी बात करने की यह क्या सूझ गई।'

बात जहां प्रारम्भ हुई थी वहीं समाप्त होती गई लग रही थी। अहमद के मन को एक ठेस लगी। उसने सोचा क्या राम-चरण की तौहीन हो जाएगी! साहस कर उसने धनीराम से कहा—सेठ जी! वर-वधु दोनों ही शिक्षित हों तो गृहस्थी का मेल कितना सुन्दर रहेगा।'

अहमद की बात धनीराम रूपी चिकने घड़े पर बूंद के समान सिद्ध हुई। उसने दो टूक कह दिया—'अहमद चाचा! रामचरण के लिए अच्छा यही है कि अपनी औकात को समझ कर किसी और घर की तलाश करें।' इतना कहते हुए वह अपने पूजागृह की ओर बढ़ गया।

सचमुच धनिक के हाथों निर्धन की उपेक्षा हुई। रामचरण पर निराशा और ग्लानि छा गई, उसने अहमद चाचा के हाथ थाम कर कहा, क्यों, मेरे भाग्य में यही लिखा है। अभी रामचरण कुछ और कहता इसके पूर्व ही उत्तम ने अपने अध्ययन कक्ष से निकलते हुए कहा—'नहीं।

उत्तम की ओर देखते ही रामचरण की आंखें सजल हो उठीं। हृदय की व्यथा को नेत्रों से निकली दो बूंदे भाषा दे रहीं थीं।

उत्तम ने स्थिति को समझते हुए कहा—"धैर्य से काम लीजिए चाचा।

अहमद चाचा ने उत्तम की पीठ ठोंकते हुए कहा—'उत्तम, तुम मेरी आशा हो।' और रामचरण को साथ लेकर अपने घर की ओर चल पड़ा।

अपने पूजागृह से निकलते ही धनीराम की नजर उत्तम पर पड़ी। उसे चिन्ता व उदास देखकर धनीराम ने कहा—'बेटा! पता चला! ये दोनों क्यों आए थे?'

"हां पिताजी! रामचरण अपनी पुत्री को आपकी पुत्रवधु बनाना चाहता है?' उत्तम बोला।

सगर्व धनीराम कहने लगा—"बेटा यहां आने से पहले उसने अपनी औकात पर तो नजर डाली होती।'

धनीराम की उक्ति की उपेक्षा करते हुए उत्तम बोला—'पिताजी! हर बेटी वाला अपना कन्यादान का फर्ज अदा करने के लिए क्या नहीं करता? इसमें औकात का प्रश्न....?'

धनीराम ने फिर अपना बड़प्पन प्रकट किया—"बेटा! उसे क्या पता कि अशर्फीलाल अपनी पुत्री का प्रस्ताव लेकर कितनी जूतियां घिस चुका है।'

उत्तम इस बार व्यंग पर उतर आया था—"हां पिताजी! आप व्यापारी लोग तो सौदेबाजी ही जानते हो। अशर्फीलाल सोचता है कितने कम में धनीराम का पुत्र खरीद सकता हूं और आप चाहते हैं अशर्फीलाल को कितना लूट लिया जाए। दहेज की सम्पत्ति ही आप लोगों के वैवाहिक सम्बन्धों का एक मात्र आधार है।

उत्तम के शब्द धनीराम पर चोट कर रहे थे। उसकी भौंहों में बल पड़ गए वह बोला—बेटा! शायद तुम सुधार-वादियों के चक्कर में आ गए हो। पर याद रखना धनहीन मनुष्य का समाज में अस्तित्व नहीं।"

"यह माना पिताजी! किन्तु धनार्जन के लिए भगवान ने दो हाथ दिए है। किसी की मजबूरी का लाभ उठाना कहां का न्याय है?' उत्तम ने दो टूक उत्तर दिया।

उत्तम! अपनी मर्यादा से बाहर न निकलो। धनीराम ने उत्तम को डांट दिया।

"पिताजी! क्षमा करें। ग्रामोत्थान की दिशा में अहमद चाचा का साथ हम नहीं देंगे तो गांव का विकास कैसे होगा? विनय और नम्रता के स्वर में उत्तम ने अपना मत व्यक्त किया।

'बेटा! सुधार का ठेका हमारा ही तो नहीं है।" धनीराम ने उपेक्षा भरे स्वर में कहा।

'पिताजी! समाज के नव-निर्माण की दिशा में हम पढ़े-लिखों को पहल अवश्य करनी चाहिए।' उत्तम के इस वाक्य के साथ ही अहमद चाचा ने प्रवेश करते हुए कहा—'भई धनीराम जी! उत्तम ठीक कहता है।"

'अहमद चाचा! परिवार के मामलों में निर्णय लेने का दायित्व मेरा है। धनीराम ने अहमद चाचा का मुंह बन्द कर देना चाहा, किन्तु वह तो गांव का मुखिया था। सरपंच था। निर्णय के स्वर में फिर बोल उठा—'अपने जीवन के मामलों में निर्णय का दायित्व उत्तम का भी है। और फिर अपना तर्क देते हुए कहने लगा—"धनीराम! तुम्हें धन सम्पत्ति चाहिए किन्तु उत्तम को जीवन

साथी चाहिए और जीवन साथी का अभाव धन से पूरा नहीं किया जा सकता।

धन को सर्वस्व मानने वाले धनीराम ने अपना तर्क बड़प्पन प्रकट करते हुए कहा--'अहमद चाचा! तुम समझते क्यों नहीं। विवाह सम्बन्धों में बराबरी के परिवार चाहिए। अहमद ने अब दांव फेंका--'धनीराम ठीक कहते हो। तुम्हारा और रामचरण का, दोनों का ही परिवार समान है।

'वह भला कैसे? कहते धनीराम की आंखें फटी की फटी रह गई।

अहमद ने स्पष्ट किया--'उत्तम ग्रेज्युएट है और रामचरण की पुत्री लक्ष्मी भी ग्रेज्युएट है। क्या यह समानता नहीं है।"

धनीराम एक बार तो निरुत्तर हो गया किन्तु संभल कर बोला--'लक्ष्मी का ग्रेज्युएट होना हमारे घर क्या लाभ। मुझे उसे नौकरी तो नहीं करवाना है।

'धनीराम! शिक्षित माता समस्त परिवार को शिक्षित बना देती है। अपने बच्चों की परवरिश भली प्रकार करके उनमें नागरिकता के गुण पैदा कर देती है। भला सोचो शिक्षित लड़के के साथ धनपति की अशिक्षित पुत्री का विवाह, बेमेल विवाह नहीं होगा। क्या ऐसे में गृहस्थी सुखद बन सकेगी? अहमद धार-धार सा देख रहा था और इस बीच उसने देखा कि धनीराम के चेहरे पर विरोध की रेखाएं मिटती जा रही हैं।

अहमद ने फिर कहा 'धनीराम'। यह भी हो सकता है कि रामचरण की कुटिया पर उत्तम की बरात ले जाना तुम अपनी तौहीन समझते हो किन्तु मानव-मानव में भेद करना इन्सानियत नहीं है। धन-सम्पत्ति के आधार पर मानव-मानव के बीच विभेद की रेखा नहीं खींची जा सकती। ऊंचे ध्येय के लिए अधिकाधिक झुक जाना ही बड़प्पन की निशानी है। फिर अहमद ने कुछ रुक कर चुटकी लेते हुए कहा--'सेठ जी। धन सम्पत्ति का आना-जाना तो धूप-छांह की तरह है किन्तु विद्या तो अमूल्य दान व अक्षय सम्पत्ति है। तुम्हारी आराधना धन की देवी लक्ष्मी है तो रामचरण की आराधना विद्या की देवी सरस्वती है, धनीराम! और जानते हो विद्या के बिना जगत में अन्धेरा ही अन्धेरा है।

अहमद के वचन धनीराम को प्रभावित कर रहे थे, वह सहज ही जैसे अहमद की बात का समर्थन कर बैठा--'हां चाचा' विद्या विहीन नर पशु समान है।

अहमद खूब जानता था कि चोट गर्म लोहे पर ही की जाती है, अतः धनीराम को उपरोक्त उक्ति के साथ ही उत्तम को सम्बोधित कर उसने कहा--'उत्तम। फिर हम क्यों कर उपेक्षा करें विद्यमान लक्ष्मी की।'

उत्तम ने लज्जा प्रकट करते हुए मुस्करा कर मुंह फेर लिया। धनीराम अब कर्त्तव्य विमूढ़ सा लग रहा था।

बसन्त पंचमी पर आदमपुर के खेतों में बहार आई हुई थी। लोगों के दिलों में उल्लास था। गांव के विद्यालय में सरस्वती पूजन का आयोजन, इस अवसर पर रखा गया था। समारोह की अध्यक्षता धनीराम कर रहे थे। अहमद चाचा मुख्य अतिथि थे। समारोह में विद्या देवी सरस्वती के बखान हुए। उत्सव समाप्ति पर अहमद ने धनीराम को कहा।--धनीराम। रामचरण की पुत्री विद्या की प्रतिमा लक्ष्मी की उपेक्षा के प्रायश्चित का आज उपयुक्त दिन है;

'अहमद चाचा! आपकी बात का प्रयोजन!' विस्मय से धनीराम बोला।

अहमद ने प्रयोजन इस तरह प्रकट करना प्रारम्भ किया--'धनीराम! समारोहों में विद्या की देवी के गुणगान से उसकी सही प्रतिष्ठा नहीं होती। जीवन में उसकी उपेक्षा का त्याग कर महात्याग स्वीकार करने में ही हमारी कथनी व करनी में एकता आएगी। मेरी इच्छा है कि इस पुण्य दिवस पर हम रामचरण के द्वार पर चल कर उत्तम के लिए उसकी पुत्री की मांग कर धन के दृष्टिकोण से ठुकराई गई विद्या की प्रतिमा को प्रतिष्ठा प्रदान कर गांव के समक्ष यह प्रस्ताव रखें कि हमने धन की उपेक्षा विद्या को ही महत्ता दी है। दहेज की कुरीतियों को तोड़ कर व्यक्ति, के गुण को स्थान दिया है।

अब धनीराम अहमद की बात को मंत्रमुग्ध सा होकर सुन रहा था। अहमद ने फिर कहा 'धनीराम उत्तम गांव की सम्पत्ति है, दहेज की राशि निर्धारित कर उस ग्राम गौरव की अमूल्य प्रतिमा की कीमत नहीं आंकी जा सकती।

अहमद की बात से प्रभावित होकर धनीराम बीच में ही बोल उठा--'बस करो अहमद चाचा! मुझे और लज्जित मत करो।--मेरा बेटा उत्तम अमूल्य है, तो रामचरण की पुत्री लक्ष्मी भी अमूल्य है। तुमने मेरी आंखें खोल दी हैं। वास्तव में दहेज की रकम से उसकी कीमत आंकने से उसका दर्जा घट जाएगा। इतना कहने के साथ ही बरबस ही वह अहमद चाचा का हाथ पकड़ कर रामचरण की कुटिया की ओर बढ़ने लगा।

गांव में मुखिया और नगर सेठ को अपने द्वार पर देख कर रामचरण आश्चर्य से उन्हें स्वागत को आया तो धनीराम ने उसे भावविभोर होकर गले लगा कर कहने लगा--'रामचरण! मैं अपना समस्त अहंकार तेरे राम रूपी चरणों में रख कर तुम्हारी पुत्री लक्ष्मी की मांग करता हूं, अपने उत्तम के लिए।'

अहमद चाचा के चेहरे पर एक चमक सी दौड़ गई, और वह बोल पड़ा--'रामचरण, आज, सरस्वती पूजन का दिवस है हम विद्यावति लक्ष्मी को धनीराम के खजानों की मालकिन बनाने आए हैं।'

'अहमद चाचा! कहां मैं गंगू तेली और कहां वह राजा भोज.....।' रामचरण दबे स्वर में बोला।

धनीराम ने रामचरण के मुंह पर हाथ रख कर कहा--'बस करो रामचरण। लड़कियों की शिक्षा के मामले में गांव में तुमने पहल करके नारी शिक्षा के द्वार खोल दिए हैं। तो दहेज का तिरस्कार कर मुझे भी गांव के नवनिर्माण में भागीदार बनने दो मेरे भाई।'

और देखते ही देखते रामचरण और धनीराम के द्वार पर शहनाई गूंज उठी। अहमद चाचा का दिल खुशी से बल्लियों कूद रहा था कि उन्होंने गांव के नवनिर्माण में एक चमकीला पत्थर और जड़ दिया था।

रामचरण ने पुत्री लक्ष्मी को विदा किया। लक्ष्मी अपनी मां की तस्वीर के आगे शीश नवा कर उत्तम के पीछे हो गई। धनीराम ने रामचरण से गले मिलकर विदा ली।

शेष पृष्ठ 27 पर

पहला सुख निरोगी काया

केला खाइये बल बढ़ाइये

* वैद्य गोपाल सहाय शर्मा

केला एक पौष्टिक खाद्य पदार्थ है। पका एवं कच्चा दोनों ही प्रकार का केला खाने के उपयोग में लिया जाता है। कच्चे केले की सब्जी बनाई जाती है, एवं पका केला खाने के काम में आता है। केले के फूल की सब्जी भी बहुत से व्यक्ति खाते हैं। केला पकने के पश्चात् पीला हो जाता है परन्तु केले की एक विशिष्ट जाति में बीज भी पाए जाते हैं। कहीं-कहीं केले इतने मीठे होते हैं कि एक केले को खाकर तीन मनुष्यों का आहार पूरा हो जाता है। बहुत से स्थानों पर केले के आटे का प्रयोग करते हैं।

केले के गुण :—कच्चा केला खाने में स्वादिष्ट, शीतल, भारी, कफनाशक, चिकना और कब्ज कारक होता है। कच्चा केला सूखने पर अग्निवर्द्धक, नेत्र रक्षक, ज्योति-दायक, प्यास और प्रेमेह एवं प्रदर रोग नाशक होता है। पका केला पौष्टिक होता है, शक्तिवर्द्धक, वीर्यवर्द्धक, अग्निवर्द्धक होता है, रक्तपित्त को नष्ट करता है। यह मधुर तथा शीतल होता है। इससे हृदय पुष्ट होता है, शरीर में मांसवृद्धि होती है। यह रक्त-पित्त, वादी, तृषा, दस्त, प्रेमह, धातु-क्षीणता, प्रदर, दाह आदि रोगों को नष्ट करता है।

केले द्वारा विभिन्न रोगों की चिकित्सा

1. हृदय रोग:—केले की दो फली एक तोला शहद के खाने से हृदय की कमजोरी आदि में बहुत ही अच्छा लाभ मिलता है।

2. हिचकी :—केले के पत्तों की एक माशा राख, एक तोला शहद के साथ चाटने से ठीक हो जाती है।

3. आंखों के आने पर :—केले की रसदार फली का रस आंखों में लगाने से लाभ हो जाता है।

4. प्रदर :—यह रोग बहुतायत से स्त्रियों में विद्यमान रहता है। इससे स्त्रियों के स्वास्थ्य पर बुरा असर पहुंचता है। इसके लिए केले के पत्तों को महीन पीसकर गाय के दूध में खीर बनाकर खाने से काफी आराम मिलता है। पका हुआ केला और आंवले का रस समान मात्रा में लेकर मिश्री मिलाकर खाने से प्रदर रोग में आशुफल-प्रद सफलता प्राप्त होती है। पके केले का गूदा लेकर उसे घी में खूब भूनकर शहद मिलाकर सेवन करने से धातुगत रोग, प्रमेह, स्वप्नदोष, प्रदर सभी प्रकार के रोग नष्ट हो जाते हैं।

5. मुख से खून आने पर :—पके केले के गुदे में मिश्री, इलायची, एवं वंशलोचन मिलाकर खाने से आराम प्राप्त होता है।

6. केले में पुष्ट दल को सुखाकर चूर्ण कर लें। एक तोला चूर्ण, एक तोला कलमी शोरा, दो सेर पानी के साथ सबको एक घड़े में शाम को भर दें और सुबह गाय का कच्चा दूध 2 सेर मिला दें। एक गिलास प्रतिदिन सुजाक के रोगी को पिलावें। सारे पानी को पीने के बाद रोगी को खूब पेशाब होगा। उस दिन रोगी को खाने को कुछ भी नहीं देना चाहिए तथा इस दिन दूध ही पिलावें। इससे सूजाक जड़ से चला जाता है।

7. अतीसार, संग्रहणी :—पके केले के अन्दर सरसों के दाने के बराबर अफीम रख कर खाने से लाभ मिलता है। पका केला 2 भाग और एक भाग गाय के दही के साथ खाने से लाभ मिलता है। साथ ही थोड़ी सी केशर मिलाकर खाने से पेचिस एवं संग्रहणी ठीक हो जाती है।

8. एक पके हुए केले को 1/2 तोला घी, इलायची एवं मिश्री के साथ 8 दिन तक लगातार खाने से धातु-क्षीणता, स्वप्नदोष आदि रोग भी ठीक हो जाते हैं तथा इसको छाया में सुखाकर चूर्ण बनाकर खाने से भी गर्मी आदि रोग दूर हो जाते हैं। ●

—मकान नं. : 12136
पुरोहित मोहल्ला
भरतपुर (राज०)

पृष्ठ 9 का शेष

की समस्या से बेखबर नहीं है। वह अपनी पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा इस दिशा में विशेष प्रयास कर रही है। लेकिन ये प्रयास तो ऊंट के मुह में जीरे के बराबर हैं। वक्त का तकाजा तो यह है कि इस दिशा में लड़ाई की-सी सरगर्मी लाई जाए और जोश दिखाया जाए।

—अनुवादक :
श्री आर० एन० सिंह
सी-II/2 -ए लारेंस रोड
फ्लैट्स, दिल्ली 110035

पृष्ठ 26 का शेष

अहमद चाचा ने जाते हुए धनीराम को सम्बोधित कर कहा—'धनीराम ! दहेज का सामान लेते जाओ . . .' कहते हुए फ्रेम में मढ़ी लक्ष्मी की बी० ए० की डिग्री भेंट कर दी जिसे दोनों हाथों से लेकर धनीराम ने अहमद को गले लगा लिया और दोनों के नेत्रों में प्रेमाश्रु छलक पड़े। ●

—पो० खीमेल
वाया—रानी स्टेशन,
जिला—पाली (राज०)

एशियाई खेल और भारत—लेखक: योगराज थानी, प्रकाशक : राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 128, मूल्य : साढ़े छः रुपए।

'एशियाई खेल और भारत', श्री थानी की एक और नवीनतम पुस्तक है। क्रीड़ा-जगत् में इस पुस्तक ने एक महत्व-पूर्ण आवश्यकता की पूर्ति करने का सफल प्रयास किया है। ऐशियाई खेलों के अनुभव और विकास का परिचय प्राप्त करने के लिए पुस्तक निस्सन्देह उपयोगी एवं सार्थक बन पड़ी है। ओलम्पिक की समग्र जानकारी देने के लिए पुस्तक की भाषा एवं विश्लेषण पद्धति अत्यन्त साफ एवं प्रमाण-पुष्ट है। श्री थानी की एक अन्य विशेषता यह भी है कि वे प्रत्येक तथ्य को हवा में ही प्रस्तुत नहीं करते अपितु उसके साथ पुष्ट तथा विस्तृत आंकड़ों की आयोजना, विषय को गम्भीर एवं प्रभावी बनाए रखने में सहायता के लिए करते हैं। इससे उनकी गम्भीर चिन्तन व प्रस्तुतीकरण पद्धति का परिचय मिलता है।

ऐशियाई खेलों ने भारत को ही नहीं सम्पूर्ण विश्व को सद्भाव और सदाचरण की भावना प्रदान करने का महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसकी समस्त जानकारी प्रथम बार इतने विस्तृत रूप में, इस पुस्तक से क्रीड़ा जगत् को मिल पाएगी, इसमें सन्देह नहीं। हिन्दी में यह प्रयास एक नवीन पद्धति का शुभारम्भ है। पुस्तक की भाषा सरल, स्वच्छ एवं चित्रात्मक होने के कारण पाठक को आद्यन्त रोचकता प्रदान किए रहती है। श्री थानी यहां खेलों में भारत की भूमिका का निष्पक्ष एवं सन्तुलित दृष्टि से प्रतिपादन करते हैं। प्रत्येक क्षेत्र की कतिपय निश्चित शब्दावलि हुआ करती है। लेखक की सजगता ने इसमें खेल सम्बन्धी पारिभाषिक शब्दावलि का परिचय देकर पाठक के लिए इस पुस्तक की अनिवार्य उपयोगिता को वस्तुतः बढ़ा दिया है। विस्तृत आकार और आकर्षक साज-सज्जा होने पर भी पुस्तक का मूल्य केवल साढ़े छः रुपए रखा गया है। इससे पता चलता है कि प्रत्येक वर्ग के पाठक को यह पुस्तक सहज-सरलता से इतने अल्पमूल्य में विशाल और प्रामाणिक जानकारी दिलाने में सक्षम है। ●

दिनेश कुमार गुप्ता
हिन्दी-विभाग,
आर्ट्स फैकल्टी,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली-110007

कला गुरु आनन्द कुमार स्वामी—लेखक : बैरिस्टर मुकन्दी लाल, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार मूल्य : 7 रुपये, पृष्ठ—107।

प्रस्तुत पुस्तक आधुनिक भारत-निर्माता पुस्तकमाला के अन्तर्गत लिखी गई बैरिस्टर मुकन्दी लाल की अनूठी रचना है। जिन पुङ्गव पुरुषों ने भारत की कला, संस्कृति और दर्शन को विदेशियों के सामने उजागर किया, उनमें कलागुरु आनन्द कुमार स्वामी का विशेष स्थान है। परन्तु इन कलागुरु को इस पुस्तक के माध्यम से हिन्दी में आम जनता तक पहुंचाने का श्रेय बैरिस्टर मुकन्दी लाल को है। 93 वर्षीय बैरिस्टर साहब अपनी प्रकृति सुलभ क्षमता और उत्साह से अपने वार्धक्य को झुठलाते हैं। अन्यथा इस आयु में ऐसी सशक्त रचना करते विरले ही व्यक्ति देखे गए हैं। कलागुरु के दो ही जीवित शिष्य हैं—एक है स्वयं बैरिस्टर साहब और दूसरे हैं दुरई राजा सिंगम।

बैरिस्टर साहब स्वयं प्रखर कलापारखी एवं बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं अतः उन्होंने जिन्हें गु बनाया, उनके गुरुत्व व प्रतिभा का सहज अनुभव लगाया जा सकता है। आनन्द कुमार स्वामी के पिता बैरिस्टर श्री मुत्तुकुमार स्वामी तमिलभाषी थे और श्री लंका में बस गए थे। आनन्द कुमार स्वामी के जन्म के कुछ ही समय बाद उनके पिता दिवंगत हो गए। अंग्रेज माता ने इंग्लैण्ड में उनकी शिक्षा की व्यवस्था की। बाद में वे कोलम्बो में भूगर्भ विभाग के निदेशक नियुक्त हुए जहां भारतीय कला, संस्कृति व दर्शन के प्रति उनके हृदय में अनुराग अंकुरित हुआ। बाद में, वे भारतीय कला के श्रेष्ठ एवं मर्मज्ञ भाष्यकार बने।

प्रस्तुत पुस्तक के चयन-प्रणयन में उपादेय सामग्री जुटाई गई है। इसमें बताया गया है कि कलागुरु के प्रयास व प्रचार के परिणामस्वरूप जहां विद्यालयों में पाश्चात्य शैली की चित्रकला का अनुसरण और अध्ययन-अध्यापन किया जाता था, वहां भारतीय कला के आदर्शों तथा कला की परम्परागत पद्धतियों पर विचार विनिमय होने लगा।

प्रस्तुत रचना में कला की विभिन्न परिभाषाएं दी गई हैं। साथ ही बंगला चित्र शैली, बोस्टन म्यूजियम में भारतीय चित्र संग्रह, कला की विलक्षण ध्यान योग पद्धति, एशिया की कला-मान्यताएं, पाश्चात्य और प्राच्य कला-विज्ञान, लोक-कला, विभिन्न कला शैलियों, धर्मसम्बन्धी विचार, वैदिक-दर्शन,

रामायण व महाभारत, बुद्ध जातक कथा आदि पर पांडित्य-पूर्ण विवेचन किया गया है।

भारतीय प्राचीन कला से अभिभूत होकर वे लिखते हैं, "विभिन्न कला पद्धतियों के अन्तर्गत जिन कलाकृतियों ने रूप-आकार धारण किया उनको सिवा हमारे देश के कलाकारों के और कोई नहीं बना सकता है। उसको जीवित रखना हमारा कर्त्तव्य ही नहीं, परमकर्त्तव्य है।" 'डांस आव शिव' में श्री कुमार स्वामी ने चित्रकला व मूर्तिकला सम्बन्धी कई निबन्ध लिखे हैं, जो कलाकारों द्वारा भारतीय कला को समझने के लिए बहुत उपयोगी हैं।

कलागुरु ने, बीसवीं सदी के प्रथम दशक में जब कि स्वदेश प्रेम और आजादी की चर्चा को घोर राजद्रोह माना जाता था, लिखा था "स्वराज्य सदा के लिए टाला नहीं जा सकता है.... हम को यह भी महसूस करना चाहिए कि कोई भी जाति दूसरी जाति या राष्ट्र पर अपना अधिकार सिद्ध नहीं कर सकती ....." वे भारत की प्राच्य संस्कृति एवं जन सामान्य की अवहेलना से खिन्न होकर कहते हैं "आजकल का नकलची चितेरा जनसमूह से पृथक् रहने वाला अजीब व्यक्ति है.....आधुनिक कलाकार जनता की स्मृति परम्परा, आदर्श और उनके पूर्वजों के विश्वासों की परवाह नहीं करते हैं, उनकी ओर ध्यान नहीं देते हैं।"

कलागुरु ने कहीं-कहीं तो पाश्चात्य सभ्यता पर करारी चोट की है, जैसे दुरई राजा सिंगम के पुत्र को लिखे गए पत्र में उन्होंने कहा है, "यह सच है कि पाश्चात्य सभ्यता एक संगठित बर्बरता से भिन्न कुछ भी नहीं है और हमारे भारतीय विद्यार्थी जो कि पाश्चात्य विचारों के पिछलग्गू हैं, वे भी असंगठित बर्बरता के प्रतीक हैं"।

कलागुरु ने जहां निर्भीकता से पाश्चात्य सभ्यता की धज्जियां उड़ाई, वहां उन्होंने गांधी जी जैसे महान व्यक्ति को, जगत् गुरु मानते हुए भी, नहीं बख्शा। उन्होंने एक पत्र में लिखा है, "अक्सर गांधी जी यह भूल जाते हैं कि वह क्या कह रहे हैं और किस विषय में कह रहे हैं। अधिकांशतया वह यह मानते प्रतीत होते हैं कि कला चित्रकारी मात्र है जो एक बचकानी बात है। किन्तु वास्तव में भारतीय दृष्टि कोण से और सभी परम्पराओं के दृष्टिकोण से कला के अन्तर्गत जगत की समस्त रचना—विधान आ जाता है....."

इसमें सन्देह नहीं कि बैरिस्टर साहब का स्वयं भी कला पर किए गए काम में योगदान महत्वपूर्ण है। इस सम्बन्ध में उन्होंने गढ़वाल चित्रकला के अन्तर्गत बहुत उपयोगी सामग्री दी है। उन्होंने कला के क्षेत्र में डा० रन्धावा को भी आड़े हाथों लिया। वे लिखते हैं कि डा० रन्धावा ने भी अक्सर यही गलती की कि जिस राज्य में उनको चित्र मिले उसी राज्य की देन उन चित्रों को बताया। बैरिस्टर महोदय ने ही 'वन में मिलन' चित्र के विषय में जो कि लन्दन में भारतीय चित्रकला की प्रदर्शनी में दिखाया गया था, बताया कि वह कांगड़ा का नहीं है अपितु गढ़वाल-कला की देन है। उनकी दलीलों को ठीक मानकर इस आशय की एक पुस्तक विलियम आर्चर ने लिखी थी।

पुस्तक में "बंगाल में कहावत है कि जो महाभारत में नहीं वह भारतवर्ष में नहीं है।" कहा गया है। वस्तुतः बंगाल की यह कहावत महाभारत के आदि पर्व 56/33 से ली गई है।

'यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्।'

इन सब के बावजूद भाषा में अपेक्षित गठन नहीं है अनेक स्थानों पर थोड़े शब्दों से काम लिया जा सकता था। कहीं-कहीं प्रूफ की भी भूलें हैं जो कि प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक में होनी ही नहीं चाहिए थीं, जैसे संगृहीत के स्थान पर संग्रहीत, ख्याल के स्थान पर स्थाल कैकेयी के स्थान पर कैकेई, प्रद्युम्न के स्थान प्रदुम्न आदि अनेक शब्द अशुद्ध दिए गए हैं।

पुस्तक के अन्तिम कवर पर कलागुरु के दूसरे जीवित शिष्य इंडोनेशिया के दुरई राजा सिंगम बताये गए हैं, जबकि भूमिका में उन्हें मलेशिया निवासी बताया गया है। यह भयंकर भूल है।

सब मिलाकर यह पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है। हिन्दी में ऐसी पुस्तकों का प्रकाशन अभिनन्दनीय है और बैरिस्टर मुकन्दी लाल भी बधाई के पात्र हैं जिन्होंने अनेक तमसावृत्त पक्षों को अपने ज्ञान-प्रकाश से उजागर किया। ●

ब्रजलाल उनियाल

बच्चे की देखभाल : मूल लेखक, डा० पी० तिरुमल, राव, रूपान्तरकार: लक्ष्मीरमन वर्मा, प्रकाशक : राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, मूल्य : 9.00 रुपए, पृष्ठ 197।

बच्चों के जन्म, पालन-पोषण एवं स्वास्थ्य आदि के सम्बन्ध में विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए डा० पी० तिरुमल राव ने 'ए हैंड बुक आफ चाइल्ड केयर' पुस्तक की रचना की है। 'बच्चे की देखभाल इसी पुस्तक का रूपान्तर है। यह दो खण्डों, अट्ठाईस शीर्षकों एवं अनेक उपशीर्षकों में व्याप्त है। प्रथम खण्ड में गर्भाधान, प्रसव की तैयारी, नवजात शिशु की देखभाल उसके आहार आदि विषयों पर संक्षेप में विचार किया गया है। द्वितीय खण्ड में बालकों के रोग तथा उनकी रोकथाम, दुर्घटनाएं, पढ़ाई एवं परिवार कल्याण पर लेखक का स्पष्ट अध्ययन बच्चों के माता-पिताओं का मार्ग दर्शन करता है।

प्रस्तुत पुस्तक में बच्चे के जीवन की प्रथम पांच वर्षों की समस्याओं, आवश्यकताओं और उनके सर्वांगीण कल्याण-कार्यों की संक्षेप में चर्चा की गई है। पाठकों की सुविधा के लिए पुस्तक के अन्तिम तीन पृष्ठों (195-197) पर हिन्दी-अंग्रेजी में पारिभाषिक शब्दावली भी दी गई है। निश्चित रूप से यह एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक है। ●

—डा० इलारानी कौशिक
आई-8, पटेल मार्ग,
गाजियाबाद-201001 (उ० प्र०)

केरल की लोककथाएं : लेखक-डा० एन० ई० विश्वनाथ अय्यर, प्रकाशक-राजपाल एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली, पृष्ठ संख्या : 40, मूल्य : 5.00 रुपए।

भारत में लोक-संस्कृति का सर्वाधिक विकास हुआ है। इस प्रकार का सांस्कृतिक विकास दूसरे देशों में नहीं पाया जाता। भारत की एक और विशेषता रही है कि यहां विभिन्नता में एकता के बीज सदा से ही रहे हैं पर साथ ही यह भी देखा जा सकता है कि देश के विभिन्न प्रदेशों या राज्यों की अपनी-अपनी कुछ भिन्न-परम्पराएं रही हैं। ऐसी अंशतः भिन्न परम्पराओं की जानकारी हमें उनकी लोककथाओं के द्वारा प्राप्त हो सकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में केरल की नौ कहानियों का संकलन है। ये सारी कहानियां केरल के जन-जीवन के विभिन्न चित्र प्रस्तुत करने म समर्थ हैं। सभी कहानियों की भाषा बड़ी सरल तथा सुबोध है। कम पढ़े-लिखे व्यक्ति भी इन कहानियों को पढ़ सकते हैं। ये कहानियां मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा भी देती हैं। इन में 'ओतोतन की मृत्यु', 'गुरु कौन ?' 'अनन्तवन' आदि लोककथाएं बड़ी प्रेरणाप्रद हैं।

पुस्तक की छपाई, सजा-सज्जा तथा पुस्तक में दिए गए चित्रों से इसकी रोचकता में वृद्धि होती है। इसके प्रकाशन के लिए लेखक तथा प्रकाशक दोनों ही धन्यवाद के पात्र हैं। ●

--कु० मधु बाला
एल-11, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110032।

सहकार संदेश ※ तारादत्त 'निर्विरोध'

मिलजुल चलो कर्म के पथ से
अपनाओ सहकार,
बनाओ विश्व एक परिवार।

सहकारी वृत्ति से होता है मनुज मनुज का त्राण,
दुख आपस में बंट जाते हैं, होते नव निर्माण

एक रहें होकर अनेक सब,
बरसे प्रेम अपार।
यही है लोक राज आधार,
साथियों, अपनाओ सहकार।।

एक न कोई हो अभाव में कहीं न हो दुर्योग,
धर्म कर्म में, न्याय निति में रहे मिलन-संयोग;

जीने और जिलाने में ही
जीवन का है सार,
यही है मूल भूत अधिकार
साथियों, अपनाओ सहकार।।

ईंट-ईंट जुड़ते-जुड़ते ही बन जाते घर-द्वार,
बूंद-बूंद पानी में होता बादल का संसार,

एक हृदय से भारत जननी
ऊंचे रखे विचार।
प्रगति के सपने हों साकार,
साथियों, अपनाओ सहकार।।

--जन सम्पर्क अधिकारी
(अलवर, राजस्थान)

कुरुक्षेत्र के बारे में पाठकों की राय

कुरुक्षेत्र का वार्षिक अंक मिला। आजकल कुरुक्षेत्र पत्रिका बहुत विलम्ब से मिल रही है। आवरण पृष्ठ पर पूज्य बापू का चित्र देखकर बहुत ही खुशी हुई। इस अंक में भी श्री रामशर्मा 'राम' की कहानी 'प्रेरणा के स्रोत' बड़ी ही प्रेरणादायक लगी। मेरी ओर से लेखक को बधाई। डा० पी० शरण का लेख 'वेद में भूमि की वन्दना' अर्थात् उसका महत्व बड़ा ज्ञानवर्द्धक था। क्षितीज, वेदालंकार का लेख 'गांवों में शिक्षा तो चाहिये पर ऐसी नहीं, अच्छा था। जगदीश चन्द्र शर्मा की कविता 'सर्दी ने मेहनत के खोले हैं द्वार', बड़ी अच्छी लगी।

अन्य सभी स्तम्भों की रोचकता बनी हुई है। कृपया पाठकों के प्रश्न' स्तम्भ शीघ्र प्रारम्भ करने का कष्ट करें।

शुभ कामनाओं सहित।

प्रबोध कुमार पंडित
20, डी० रोड,
इलाहाबाद (उ०प्र०)
21003

कुरुक्षेत्र का अक्टूबर, 1978 (वार्षिक अंक) पढ़ने को मिला। इससे एक समग्र बिम्ब मानस पटल पर उभरने में समर्थ हुआ क्योंकि यह पत्रिका अपने उद्देश्य की पूर्ति करने में सफल रही है। ग्रामीण जनजीवन, लघु-उद्योग, प्रौढ़-शिक्षा की ओर बढ़ती हुई रुचि एवं साहित्यिक गतिविधि का सम्पूर्ण लेखा-जोखा प्रस्तुत करने में पत्रिका अत्यन्त सफल बन पड़ी है। 'प्रेरणा के स्रोत' कहानी 'सोलह दूनी आठ' रूपक जहां साहित्यिक एवं कलात्मक दृष्टि से अच्छे हैं वहां सम्पादक की नाटक, एकांकी रुपक विषयक रुचि का सराहनीय परिचय भी देते हैं। वस्तुत: इस पत्रिका में एकांकी, रूपकों आदि का समावेश करना कला एवं संस्कृति के प्रति बढ़ती हुई रूचि का सुखद आभास है।

यह कहने में मुझे तनिक भी संकोच नहीं कि इस पत्रिका में ग्रामांचल रोजगार की समस्याएं और समाधान, साहित्यिक समीक्षा आदि के द्वारा प्रस्तुत विस्तृत एवं सम्पूर्ण जानकारी पाठक के लिए उपयोगी सिद्ध होती है। लेखों, निबन्धों, टिप्पणियों और अन्य अनेक प्रसंगों के चुनाव में सम्पादक महोदय की निर्णय-क्षमता व निष्पक्ष प्रस्तुतीकरण की शैली, निश्चय ही स्तुत्य है। कृषि मंत्रालय इस छोटी-सी पत्रिका में इतनी अधिक जानकारी देने का एक महत्वपूर्ण और सफल प्रयास पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर रहा है—हर्ष का विषय है। साथ ही 'पहलासुख निरोगी काया' स्तम्भ की तरह यदि 'बाल जगत्' और 'महिला' जगत्' आदि स्तम्भों को स्थान मिल जाए तो पत्रिका में एक पक्ष की पूर्ति द्वारा जीवन्तता आ सकती है।

निष्कर्षत: इसे पढ़ कर ऐसा लगा कि पूरा भारत ही हमारी आखों के सामने खड़ा हो गया हो और अन्य पत्रिकाओं की अपेक्षा यह एक विशेष अभाव की पूर्ति करने में समर्थ हो। इसके साथ ही मैं इसके निरन्तर उज्ज्वल भविष्य की ईश्वर से प्रार्थना करता हूं।

—दिनेश कुमार गुप्ता
हिंदी विभाग, आर्टस फैकल्टी
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली-110007।

कुरुक्षेत्र का वार्षिक अंक, अक्तूबर, 1978 मिला और एक ही बैठक में समाप्त कर गयी। कारण, इस अंक की प्रत्येक समग्री इतनी रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक लगी, विशेषकर, वेद में भूमि की वंदना, बाल श्रमिको के हितों की सुरक्षा, गांवों में शिक्षा तो चाहिए पर ऐसी नहीं, आदि जिनके संबंध में आपको लिखे बगैर मैं नहीं रह सकी। क्या करती इन सामग्रियों ने मुझे विवश कर दिया। वैसे तो इसके प्रत्येक अंक काफी उपयोगी होते हैं, लेकिन यह अंक पिछले अंकों से काफी आगे था। ऐसी सामग्री पाकर मैं न लिखूं यह मेरे लिए कृतघ्नता से कम थोड़े ही होगी। इसके लिए लेखक व सम्पादक मंडल को मेरी हार्दिक शुभ-कामनाएं।

वास्तव में 'कुरुक्षेत्र' अपने ढंग की एक अनोखी, निराली एवं अद्वितीय पत्रिका है। दूसरे शब्दों में कहा जाए कि यह हमारी मौलिक पत्रिका है तो कोई अति-शयोक्ति नहीं होगी क्योंकि भारत मूलत: गांवों का देश है और इस पत्रिका ने मुख्य रूप से अपना कर्मक्षेत्र गांवों को बनाया है। इतने कम पैसे में इतनी ढेर सारी सामग्री 'कुरुक्षेत्र' की एक अपनी विशेषता रही है।

यदि संभव हो तो इसके अगले अंक से एक स्थायी स्तम्भ-नारी जगत्' या 'महिला जगत्' के नाम से शुरू करें जिसमें स्त्री जाति की ज्वलंत समस्याओं का कारण एवं निवारण प्रस्तुत किया जाए। इससे सिर्फ हमारी जाति का ही कल्याण नहीं होगा बल्कि समाज के सर्वांगीण विकास में बहुत बड़ी मदद मिल सकती है। 'कुरुक्षेत्र की भावी विकास के लिए हमारी हार्दिक शुभकामनाएं। ●

—श्रीमती मनोरमा शर्मा
ग्राम-अब्बूपुर,
पो: शोरमपुर,
जि: पटना, (बिहार)

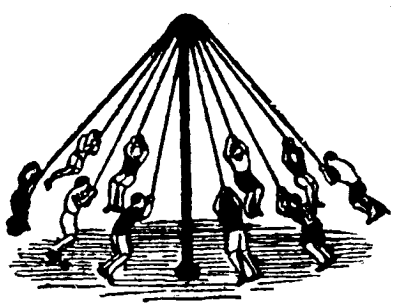

कुटीर उद्योग के लिए

लाभकारी पेड़-पौधे

डा० रामगोपाल चतुर्वेदी

हमारे देश में कुटीर उद्योग बहुत समय से प्रचलित रहे हैं। गांव गांव में फैले हैं और उनके जरिए बहुत सी उपयोगी चीजें बनाई जाती हैं। खादी और ग्राम उद्योग के लिए आवश्यक वस्तुएं हमें अपने देश में काफी मात्रा में मिल जाती हैं। इस दृष्टि से देखें तो कपास की खेती हमारे देश में बड़े पैमाने पर की जाती है। कपड़ा बनाने में कपास का रेशा खास कर इस्तेमाल किया जाता है। यही नहीं कपास से जो बिनौला मिलता है उसको भी अनेक तरह से उपयोग में लाया जाता है। कपास के बीजों के ऊपर का छिलका पशुओं को खिलाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। और गिरी को पेर कर उससे तेल निकाला जाता है। इस तेल को साफ करने के बाद खाना पकाने के काम में लाते हैं। तेल निकालने के बाद जो खली बनती है वह भी पशुओं को खिलाई जाती है। इस तरह कपास का पौधा विभिन्न तरह से कुटीर उद्योग के लिए बहुत लाभकारी है।

बहुत पुराने जमाने में ही हमारा देश सूती कपड़ों के लिए मशहूर रहा है। कपास की खेती करके और इसको कात कर और बुन कर खादी के कपड़े तैयार किए जाते हैं। अच्छी रुई से मलमल भी बनाई जाती है और इसी वजह से भारत के दस्तकार बड़ी संख्या में रोजी पाते रहे हैं। कपास की अच्छाई अपने रेशे की लम्बाई पर निर्भर करती है। हमारे देश में अच्छी किस्म की रुई पैदा की जाती है और इसीलिए कपास की सुधरी किस्म विकसित की गई है। संसार में जितना कपास पैदा होता है उसका करीब 10 प्रतिशत हिस्सा हमारे देश में ही होता है। कपास पैदा करने वाले राज्यों में आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, पंजाब, तमिलनाडु और कर्नाटक खासकर उल्लेखनीय हैं। वैसे उत्तर प्रदेश और राजस्थान में भी कपास की खेती की जाती है। यही कारण है कि बड़े पैमाने पर हमारे यहां खादी और सूती कपड़ों का निर्माण होता है। सच तो यह है कि कपास कपड़े के लिए ही नहीं बल्कि अनेक उद्योगों के लिए लाभकारी है। कपास के बीच या बिनौले कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं। बिनौले का तेल, छिलका, खली सभी काम आते हैं। इनको साबुन, रंगरोगन, नकली रेशम, कीटनाशक द्रव्य, वस्त्र रंगाई आदि में इस्तेमाल किया जाता है।

इसी तरह रेशा पैदा करने वाली वस्तुओं में पटसन का बहुत महत्व है। हमारे देश में पटसन की खेती पटसन उद्योग के विकास का आधार है। पटसन से कई चीजें बनाई जाती हैं। चीजों को लपेटने के लिए काम आने वाली चादर और बोरियां बनाने में पटसन का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। पटसन के कारखानों में लाखों लोगों को रोजी मिलती है। पटसन के महीन रेशों से अनेक वस्तुएं तैयार की जाती हैं। घर में बिछाने का फर्श, कालीन आदि बनाने में भी पटसन के रेशों का प्रयोग किया जाता है। अनुभव से पाया गया है कि जैविक और अजैविक खादों के इस्तेमाल से और पटसन की फसल की कतारों में उगाने से बढ़िया रेशा मिलता है। इसी प्रकार पटसन के रेशे की तरह ही मेस्टा का रेशा हमारे अनेक उद्योग-धन्धों में काम आता है। मेस्टा की खेती पश्चिमी बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र और आन्ध्र प्रदेश में की जाती है। इसके अलावा मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा में भी यह उगाया जाता है। पटसन की तरह ही मेस्टा के रेशे से भी आमतौर पर टाट, डोरे, सुतली, रस्से, केनवास, हैसियन नामक कपड़ा आदि बनाए जाते हैं। हैसियन का प्रयोग फर्श पर बिछाने, कपड़े बनाने, कपड़ों में अस्तर लगाने आदि कामों के लिए किया जाता है। इसके अलावा कालीन, लोई, कम्बल आदि भी बनाने में मेस्टा के रेशों को काम में लाया जाता है। रेशा उतारने के लिए पटसन की तरह मेस्टा को भी पानी में सड़ाते हैं। रेशा उतारने के लिए पटसन को सड़ाते हैं। अब आमतौर पर कुछ देशों में यह काम मशीनों की सहायता से किया जाता है।

इसी प्रकार नारियल के पौधे भी अनेक उपयोगी वस्तुएं बनाने में काम आते हैं। नारियल के पौधे जब बड़े हो जाते हैं तो इनसे अनेक लाभ मिलते हैं। फल से गिरी, तेल, खली और रेशा मिलता है। इन

सभी चीजों को काम में लाया जाता है। बड़े पेड़ों के तने मकान बनाने के लिए लकड़ी और लट्ठों का काम देते हैं। इसके पत्ते घरों की छतों को छाने के काम आते हैं। नारियल की फूल वाली शाखाओं या बिना खिले फूले वाले कांटों से रस निकाला जाता है। इस रस से गुड़, चीनी, सिरका आदि बनाया जा सकता है। नारियल के रेशे और उससे बनाई जाने वाली अनेक चीजों को तैयार करने के लिए बहुत से छोटे बड़े धन्धे हमारे देश में चल रहे हैं। इस तरह हजारों लोगों को इससे काम मिलता है। कुटीर उद्योग के विकास में नारियल के रेशों का बड़ा भारी योग है। यही नहीं नारियल का खोल प्रायः ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है और कहीं कहीं गरीब लोग इससे हुक्का भी बना लेते हैं। बड़ी संख्या में हुक्कों को बनाकर बाजारों में बेचा जाता है। कहने का मतलब यह कि नारियल के पौधे का विविध रूप से उपयोग किया जाता है और कोई भी हिस्सा इसका बेकार नहीं जाता है। संसार में जितना नारियल पैदा होता है उसमें भारत का स्थान दूसरा है। और इसकी उपयोगिता को देखते हुए नारियल की खेती का क्षेत्रफल बराबर बढ़ रहा है।

गमलों में सजावट के लिए केकटस के पौधे

कुटीर उद्योग की तरक्की में बांस और चीड़ के पौधों का बड़ा योगदान है। बांस के पौधे जब बड़े हो जाते हैं तो उनसे ग्रामों में तरह तरह के धन्धे चालू हो जाते हैं। बांस की अच्छी किस्मों से भांति भांति के फर्नीचर बनाए जाते हैं। इसके मोटे तने से टेबिल लैम्प और कुर्सियां व मेज बनाई जाती हैं और साधारण बांसों का गांव के लोग छप्पर आदि छाने में काफी इस्तेमाल करते हैं। यही नहीं बांस की खपच्चों से रैक और खेल के बहुत से सामान बनाए जाते हैं। इसके अलावा बांस की लुगदी तैयार करके कागज भी बनाया जाने लगा है। इस तरह बांस तरह तरह से कुटीर उद्योग के विस्तार में सहायक हुआ है। इसी तरह चीड़ के पेड़ जो कि प्रायः पहाड़ों पर उगते हैं, इमारती लकड़ी के काम तो आते ही हैं साथ ही इससे निकलने वाला लेसा भी बड़ा उपयोगी होता है। माचिस बनाने में भी इसकी तीलियां काम में लाई जाती हैं और माचिस की डिबिया भी इसकी लकड़ी से ही तैयार की जाती है। इस तरह माचिस उद्योग के विस्तार में चीड़ का बड़ा हाथ है।

इसी प्रकार हमारे देश में बहुत पुराने जमाने से ताड़ के पेड़ उगाए जाते हैं। वैसे इसके वृक्ष तो देखने में सुन्दर तो लगते ही हैं लेकिन इसकी उपयोगिता को दृष्टि में रखते हुए यह कुटीर उद्योग का भी एक महत्वपूर्ण साधन है। इसके पत्ते बड़े-बड़े होते हैं और उनसे पंखे, चटाई, टोकरी कंडी, और सर पर लगाने के टोप तैयार किए जाते हैं। इन के पौधों जिन शाखाओं पर फूल लगते हैं और उनमें बहुत रस होता है, इस रस को घड़ों में भर लेते हैं और इसे पीने के काम में भी लाया जाता है। इसे नीरा कहते हैं। यह उपयोगी पेय पदार्थ है। ताड़ के वृक्ष के तने से मकानों के लिए बल्ली और शहतीर आदि बनाए जाते हैं। इसके पत्ते छप्पर और छोटी छतरी बनाने के काम में आते हैं। इसके रस से सिरका और ताड़ गुड़ आदि भी बनाते हैं। पुराने जमाने में तो ताड़ के पत्तों की तरह लिखने के लिए काम में लाया जाता था।

शहतूत के पौधे भी कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध हुए हैं। इसके पौधों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं और रेशम के कीड़ों की बदौलत वह पदार्थ या लेसा मिलता है जिससे रेशम के कपड़े बनाए जाते हैं। यही नहीं छोटे मोटे अन्य उद्योग भी वनस्पति जगत के कुछ पौधों की बदौलत पनपते हैं। जैसा कि सब लोग जानते हैं, मूंज देश के सभी भागों में काफी मात्रा में पैदा होती है। बांगर जमीन और नदी के खादर जैसे इलाकों में प्रायः मूंज बहुत पैदा होती है। हिमालय के तराई क्षेत्रों में मूंज के घने जंगल हैं। यही कारण है कि देहरादून, बिजनौर आदि जिलों में मूंज की रस्सी व सरकंडा के कई उद्योग चलते हैं। जोनसार बांगर क्षेत्र में मूंज की रस्सी तैयार करने व सरकंडे से चिक बनाने का काम एक खास उद्योग है। इसके जरिए हजारों लोगों की रोजी रोटी चलती है।

Regd. No. D (D)/98

किसानों के लिए भरपूर पैदावार... कमाई बेशुमार...

अनेक वर्षों के अनुभव से किसानों की तसल्ली हो गयी है कि 'जहाज' छाप सिंगल सुपरफ़ॉस्फ़ेट से भरपूर फ़सल मिलती है।

जितनी भरपूर फ़सल, उतनी ही ज़्यादा पैदावार! और ज़्यादा पैदावार यानी किसानों और राष्ट्र की समृद्धि!

आपका विश्वासपात्र नाम

दि धरमसी मोरारजी केमिकल कं. लि.
प्रॉस्पैक्ट चैम्बर्स,
३१७/२१ डॉ. दादाभाई नौरोजी रोड, बम्बई ४०० ००१.

DMC/F 202

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित ।